चैतन्य लहरी

हिन्दी

मई-जून २०१३

इस अंक में

आत्मा से संपर्क आने पर ही बोध होता है। ...५

नाभि चक्र ...१८

आत्मा
से संपर्क आने पर ही बोध होता है।

पुणे, २५ फरवरी १९७९

पुण्य नगरी के नागरिकों को मेरा वंदन!

आपके सामने विस्तार से सहजयोग का महत्त्व बताया गया है। पर अगर परमात्मा की दृष्टि से विचार करें तो परमेश्वर को इसका महत्त्व अधिक है, मनुष्य से भी अधिक! परमात्मा ने इस सृष्टि की रचना की। आप जानते ही हैं, यहाँ बहुत सारे विद्वान लोग हैं, कि पृथ्वी की रचना किस प्रकार ओंकार से हुई और परमेश्वर ने उसके लिये कितनी मेहनत की। उसके बाद पृथ्वी पर वनस्पति, उसके बाद अनेक प्राणियों को निर्माण करके हज़ारों साल तक उनकी हिफ़ाजत की। उस हिफ़ाजत से धीमे-धीमे उनका चयन किया और उन्हें इस प्रकार की स्थिति में पहुंचाया कि जहाँ हम प्राणियों से भी आगे होकर आज मानव प्राणी को तैयार किया हुआ देखते हैं।

इसका मतलब यह है कि यह मानव कितनी मेहनत से तैयार किया गया है। हज़ारों वर्ष इस पर मेहनत कर के और चयन भी मेहनत से करके मानव तैयार किया गया है। आप गजेंद्रमोक्ष का प्रसंग जानते हैं। वहाँ भी मॅमल्स (सस्तन)

जैसे जो बड़े-बड़े प्राणी थे, उनमें से कुछ कुछ प्राणियों को तो बचाना ही था। तो हाथी जो एक प्राणी है, वह देवी का वाहन है। आप जानते हैं कि हाथी लक्ष्मी का वाहन है और उसमें गणेशजी का स्वरूप भी है। तो उसे बचाने के लिये उन्होंने गजेंद्रमोक्ष में जो अवतरण लिया, श्रीविष्णु ने उस हाथी की रक्षा की, यह तो कुछ भी नहीं था। आगे चल कर देवी को अपने भक्तों की रक्षा के लिया और आप जानते हैं, और उनकी रक्षा के लिये उन्होंने अनेक बार इस संसार में जन्म लिया और कितने सारे राक्षसों का नाश किया, उनसे युद्ध किये और अपने भक्तों की रक्षा की। यह मेहनत हज़ारों, सालों तक चलती रही। चौदह हज़ार वर्षों के पहले भी युद्ध होते थे।

उसके बाद श्रीराम के काल में भी जैसा कि आप जानते हैं, आठ हजार वर्षों का काल होना चाहिये, जब श्रीराम इस पृथ्वी पर पुरुषोत्तम के रूप में विचरण करते थे। उन्हें जो कार्य करना था, वह था कि एक आदर्श राजा किस प्रकार होना चाहिये, उसकी चेतना, उसका बोध लोगों को होना चाहिये। उसी प्रकार हमारा संपूर्ण जीवन निर्मल कैसे होना चाहिये, विशाला होना चाहिये, आदर्श होना चाहिये। यह सारा श्रीराम ने अपने अवतरण में दिखाया। उसके बाद राक्षसों का वध करते समय भी उनमें कितना संकोच, कितनी मर्यादा थी, उनका व्यवहार ऐसा था। मर्यादा पुरुषोत्तम का यह अवतरण भी बहुत कठिन और मेहनत वाला था।

परंतु उस काल में सामान्य जनता इतनी कृत्रिम, बनावटी नहीं हुई थी। इसीलिये उनमें आत्मिक, संवेदनशीलता बहुत अधिक मात्रा में थी। उसे हम स्पिरीच्युअल सेन्सिटिविटी कहेंगे। उन्होंने श्रीरामजी को पहचान लिया था। सीताजी को भी जान लिया था। पर आज की अवस्था वैसी नहीं है। उस समय जितनी मेहनत हुई, उसे बाद में श्रीकृष्णजी के काल में फिर से दूसरे प्रकार से की गयी। पर श्रीकृष्ण ने भी केवल अर्जुन को ही यह सब बताया। क्योंकि दूसरों को बताने का कोई उपयोग नहीं, बाकी सब महामूर्ख हैं, अगर उन्हें बताया, तो सिर फोड़ डालेंगे, अन्यथा कुछ उलटापुलटा कर बैठेंगे इसीलिये श्रीकृष्ण ने यह बात किसी दूसरे को नहीं बतायी। किन्तु बहुत सारे लोगों ने उनकी संहार शक्ति से पहचान लिया कि यही वे श्रीकृष्णजी हैं। उसके बाद कंस वध भी हो गया और उन्होंने यह बात सिद्ध कर के दिखाई कि श्रीराम के बाद लोगों ने धर्मांधता से जो अनाचार शुरू किये थे, उसकी एक दूसरी भी बाजू, पक्ष है। वह है परमेश्वर के साक्षी रूप की। उनकी सोलह हजार पत्नियाँ थी। वे कौन थीं? वे तो श्रीकृष्ण की ही सोलह हज़ार शक्तियाँ थी। उन्होंने इन शक्तियों को जन्म दिया था। हम सहजयोगियों को जैसे सहजयोगियों की आवश्यकता होती है वैसे श्रीकृष्ण को भी अपनी शक्तियों की आवश्यकता थी। पर उन्हें संसार में कैसे लायें, तो उन्होंने इन रूपों में उन्हें संसार में लाया था। और उन शक्तियों का उपयोग भी किया। पर फिर भी श्रीकृष्ण योगेश्वर थे, यह झूठी बातें नहीं। वे उनकी शक्तियाँ थीं, उन्होंने स्त्री रूपों में इस संसार में उन शक्तियों को लाया था और उनके पतित्व का स्वीकार कर के उनका उपयोग किया।

कोई भी कार्य शक्ति के बिना हो ही नहीं सकता। जब कंस का वध करने का प्रसंग आया तब उन्होंने राधाजी से कहा कि, 'तुम्हें ही आ कर उस पर प्रहार करना होगा।' अब ये सारी बातें बहुत गहन हैं और मनुष्य (की समझ) से उस पार हैं, इसीलिये मैं आपको नहीं बताती क्योंकि उससे केवल अविश्वास ही निर्माण होगा।

परमात्मा ने जो इतनी बड़ी मेहनत की है, यह जो मानव की रचना की है और यह जो सृष्टि की रचना की है उसका अब इस कलियुग में कुछ तो भी अर्थ लगना ही चाहिये। अगर हमने एक घर बनाया और उसके ऊपर अगर कलश या शिखर नहीं होगा, तो उसका कोई अर्थ नहीं। कौन रहेगा उसमें? क्या उपयोग है उसका? उसी प्रकार मानव ने जब तक स्वयं का अर्थ नहीं लगाया या जाना, तब तक उस पर की गयी यह सारी मेहनत व्यर्थ है। उसने स्वयं 'स्व' का अर्थ लगा कर देखना ही चाहिये। उसे समझना ही चाहिये कि उस अमीबा से मनुष्य क्यों हुआ और फिर उसे यह भी समझना चाहिये कि वह परमेश्वर जिसने मनुष्य को बनाया है और जिसने सारी सृष्टि की रचना की है, वह परमात्मा कौन है? कैसा है? उसकी शक्ति क्या है? इतना ही नहीं, वही शक्ति मनुष्य में बहनी चाहिये और उन्होंने जानना चाहिये कि परमात्मा की यह शक्ति मुझ में भी वैसी ही बह रही है, जैसे कि मुरली के अन्दर से श्रीकृष्ण के संगीत के सुर बहते थे। यह होना ही चाहिये। अगर यह हुआ नहीं तो परमात्मा को भी कैसे अर्थ लगेगा?

परमात्मा ने सृष्टि की रचना की, मनुष्य को बनाया, वह इसीलिये कि मानव ने परमात्मा को जानना चाहिये। और यह बिल्कुल सीधी बात है, आपको बेटा होता है, आप उसको मेहनत से छोटे से बड़ा करते हैं और अपनी सारी संपदा उस के लिये लिख देते हैं। परमात्मा भी वैसा ही करते हैं। उन्होंने आपको निर्माण किया, इस स्थिति पर ला कर पहुँचा दिया। अब परमात्मा की ऐसी इच्छा है कि आपको उसकी शक्ति मिलनी चाहिये। जैसा आपके संसार में, परिवार में है बिल्कुल वैसा ही परमात्मा के संसार में है। वास्तव में इस संसार में जो कुछ आया है, वह सब परमात्मा से ही आया है। जैसे आपके पिता को आपसे प्रेम है वैसे ही परमात्मा को आपसे अत्यंत प्रेम है। आपके पिता में यह जो अंश है, वह उस सागर का ही एक अंश है। ऐसे प्रेम करने वाले (परम) पिता से आपको जो कुछ मिला है, उसे आप अब तक जानते ही नहीं। आपको मालूम ही नहीं। इसीलिये उसके बहुत सारे प्रकार हो गये हैं।

अब हमने महाराष्ट्र में ही हमारा जन्म क्यों लिया? महाराष्ट्र सचमुच जैसा उसका नाक है वैसा ही महा+राष्ट्र है। यह भूमि संतों की है। यह एक बड़ा इतिहास है। संतों ने इस भूमि को सुंदर बनाया है। अपनी भक्ति से आपके धर्मों को सम्हाला है उन्होंने। आपकी पवित्रता का भी जतन किया है। यह किसलिये? हम दिन रात यज्ञ करते हैं, पाठ करते हैं, मंदिर जाते हैं, चर्च जाते हैं, नमाज़ पढ़ते हैं, यह सब किसलिये? केवल करने के लिये नहीं है, उसका उद्देश्य उसके आगे है। वह है आत्मज्ञान का। हमने हमारी आत्मा को जान लेना चाहिये, पहचानना चाहिये, यह आस, खिंचाव उस में है, इसीलिये हम यह सब कुछ करते हैं।

पर हमने तो अभी ही सब कुछ कर डाला है। वास्तविकता तो यह है कि जब तक हम अपनी आत्मा को जानते नहीं तब तक परमात्मा के नाम से हमने अगर कुछ भी किया तो भी वह परमात्मा तक पहुँचता ही नहीं। जैसे कि इस इन्स्ट्रुमेन्ट में जो कॉइल है, वह जब तक मेन से लगती नहीं, तब तक मेरी आवाज़ आप तक जा नहीं सकती। वैसे ही जब तक आपका संबंध परमात्मा से नहीं होता, आपकी आत्मा के द्वार से, तब तक परमात्का क्या है, उसकी मूर्ति का अर्थ क्या, उसके पूजन का क्या अर्थ है, या आपका ही क्या अर्थ है, यह सब नहीं जान सकते। एक सीधी बात है। उसको हमने अगर ध्यान में रखा तो हम जान सकेंगे कि सब धर्मों में इतनी धर्मान्धता क्यों है!

आत्मा से संपर्क आने पर ही बोध होता है।

जैसे कि आपके पास एक टेलिफोन है। अगर आप ने उसका संबंध मेन्स (mains) से जोड़ा नहीं तो उस टेलिफोन से आपने कितने भी फोन किये, तो भी आपको कुछ भी उत्तर नहीं मिलेगा। उलटे, टेलिफोन ही खराब हो जाएगा। सबसे पहले आत्मा की पहचान होनी ही चाहिये। वह अति आवश्यक है। पर धर्म भी सम्हालना होता है। अगर आपमें मानव धर्म नहीं होता, मान लीजिये, कि आप पशु धर्म के होंगे, तो किसी भी पशु को यह स्थिति आ ही नहीं सकती। मतलब अगर इस इन्स्ट्रुमेंट में केवल इतना ही हिस्सा तैयार है तो क्या आप उसको मेन्स से जोड़ सकते हैं? जब तक मानव तैयार नहीं होता, तब तक कुंडलिनी ऊपर उठ ही नहीं सकती। तो केवल मानव को ही अधिकार है कि उसने अपनी आत्मा को जानना है। और जब आत्मा को जानने का अधिकार केवल मानव को ही मिला है, तब मानव का जो धर्म है उस धर्म को समझ लेना आवश्यक है। आज तक जो साधु-संत हो गये उन्होंने सबने केवल अपने धर्म को सम्हालकर रखा है। दूसरा कुछ भी नहीं किया। उन्होंने अपना धर्म ऐसे सम्हाला कि आप धर्म में संतुलन रखिये। धर्म में ठीक से आचरण करिये। हमारे देश में इतने साधु-संत हो गये, नानक, कबीर हो गये। अब हमारे यहाँ तो बहुत ही बड़े-बड़े संत हो गये। ज्ञानेश्वर हो गये, तुकाराम हो गये। ये सब संसार में ही रहने वाले लोग थे। जंगल में भाग कर उन्होंने कुछ भी नहीं किया। सब काम दुनियादारी निभाते हुए ही किया है। लोगों में, सर्वसाधारण, सामान्य लोगों में उन्होंने काम किया है। किसी ने जंगल में बैठकर, पहाड़ों पर बैठ कर उन्होंने किया हुआ कुछ भी काम हम नहीं जानते। आदि शंकराचार्य ने संन्यास लिया था क्योंकि अगर आपको पूरा जीवन किसी विशेष कार्य के लिये समर्पित करना है तो यही प्रथा थी कि संन्यास लिया जाये। अन्यथा विवाह के बिना नहीं रह सकते। फिर ये करो, वो करो। आज ऐसी स्थिति नहीं है। हम जानते हैं कि यद्यपि शंकराचार्य ने संन्यास लिया था तथापि उन्होंने कश्मीर से कन्याकुमारी तक भ्रमण किया और प्रत्येक स्थान पर उन्होंने धर्म की स्थापना की। लोगों को समझाया कि हमारा हिंदू धर्म क्या है। हिंदू धर्म की यह बहुत बड़ी विशेषता है और उससे थोड़ा बहुत नुकसान भी हो गया है कि हमारा हिंदू धर्म ऑर्गनाइज्ड़ (संघटित) नहीं। ऑर्गनाइज्ड़ धर्म अगर होता है, तो उसके कुछ दूसरे ही दोष होते हैं कि ईसा ने जो बताया उसे आपने सुनना है, या मोहम्मद ने जो कहा उसको सुनना है, पर स्वयं खोज करने पर इन लोगों का ध्यान नहीं रहता। क्योंकि उनमें स्वतंत्रता नहीं होती। उन्होंने ऑर्गनाइज्ड़ किया हुआ रहता है। उसके बाहर जो गये वे हमेशा के लिये गये। अगर कोई सूफ़ी बन गया, तो उसे मुसलमान नहीं माना जाता। जैसे शिर्डी के अपने साईनाथ हैं, उन्हें मुसलमान मानते नहीं। उसी प्रकार ईसाई धर्म में अगर कोई सेंट हो गया, तो उसे धर्म से बाहर निकाला जाता था। क्योंकि उनका धर्म ऑर्गनाइज्ड़ है।

हिंदू धर्म में हमें स्वतंत्रता मिली है। बहुत सारे लोग यहाँ तक है। मैं केरल गयी थी। जहाँ आदि शंकराचार्य का साक्षात् जन्म हुआ है। वहाँ के किसी भले आदमी ने मुझे कहा, 'हम नहीं जानते उनका जन्म कहाँ हुआ था वगैरा, वगैरा। उनके बारे में हमें कुछ जानकारी नहीं।' मैंने कहा, 'आपका धर्म कौन सा है?' तो उन्होंने कहा, 'हिंदू!' मैंने कहा, 'अच्छा है।' मतलब उस धर्म के बारे में कुछ भी न जानने वाले लोग भी खुद को हिंदू कह सकते हैं, यह स्वतंत्रता हमें है। इतना ही नहीं, राजनीति में अगर किसी ने कहा कि, 'हम हिंदू धर्मी हैं।' तो भी चल जाएगा। उन्हें धर्म के संबंध में कुछ भी कल्पना न होने पर भी हम हिंदू धर्मी होते हैं।

इसका एक फायदा भी है और नुकसान भी है। उसमें एक बहुत बड़ा फायदा ऐसा हुआ कि जिन लोगों ने परमात्मा को जानना था, पहचानना था, आत्मा की खोज करनी थी उन्हें पूरी तरह से स्वतंत्रता थी। इसीलिये कोई भी संत अगर संसार आया, फिर वह मुसलमान हो, हिंदू हो, ईसाई हो, कोई भी रहता तो भी हिंदू धर्म के लोगों ने उन्हें सब सम्मान दिया है। क्योंकि उसका संत भाव उन्होंने पहचान लिया है। उनकी स्वतंत्रता के कारण कभी-कभी दूसरे परिणाम भी होते हैं। उसका दूसरा परिणाम यह है कि हिंदू धर्म के संबंध में बहुत ही थोड़े लोगों को वास्तविक कल्पना है। मुझे तो ऐसे काफी कम हिंदू मिले हैं, जिसे हिंदू धर्म के संबंध में सही और वास्तविक कल्पना है।

जिसे हम ब्राह्मणाचार (ब्राह्मणों का आचरण या स्त्रियाचार) ऐसा कहते हैं, उसमें हम कुछ भी नहीं जानते। हम यह भी नहीं जानते कि ये ऐसा हमें क्यों करना है! यह क्यों करना है? कैसे करना है? हम जाने बगैर यूँ ही व्यर्थ ही कर देते हैं। मंदिर गये तो करते हैं। उस संबंध में हमें एक तरह की सुस्ती, आलस ही है, ऐसा ही कहना चाहिये या तो जिसे इन्डिफरैन्स कहते हैं, वैसी हमारी स्थिति है। पर इसी हिंदू धर्म में बहुत सारे संत हो गये हैं और सभी ने केवल एक ही सत्य बताया, क्योंकि संत होने पर केवल एक ही दिखता है। कितनी बड़ी चीज़ इस स्वतंत्रता के कारण मिली है। परंतु इस स्वतंत्रता को कायम नित्य स्थिर ही करना चाहिये। पर फिर भी जो दूसरी पीढ़ी थी उन्होंने धर्म के बारे में कभी भी विचार नहीं किया या जिन्होंने धर्मांधता ही देखी हैं और धर्म के नाम पर चलने वाले अनाचार देखे, उन लोगों ने तो अविश्वास का इतना बड़ा कंबल ओढ़ कर खुद को ढ़क लिया है, कि उन्हें समझाना बहुत मुश्किल हो रहा है। इंग्लंड में लोगों को समझाना सरल है पर हिंदुस्तान के ऐसे साहब बने हुए लोग याने बहुत मुश्किल है। मैंने तो उन्हें सब के अंत में रखा है कि ये साहब लोग जब आएंगे, तब देख लेंगे। अभी तो इन पर हमारी कुछ भी नहीं चलेगी।

फिर भी, यह स्थिति भी, यह समय भी सहजयोग ने ठीक से प्राप्त की है, पकड़ ली है। अर्थात् अब ऐतिहासिक समय आ गया है। हर एक स्तर से मानव बढ़ते-बढ़ते विशुद्धि चक्र पर, आज्ञा चक्र पर, स्वयं ही आ गया है। उसको वहाँ तक का ही ज्ञान मिल गया है। उसको सहस्रार का ज्ञान नहीं। पर ज्ञान और बोध में इन दोनों में बहुत बड़ा अंतर है। आपने बहुत सारी पुस्तकें पढ़ी होंगी, गीता पढ़ी होगी, ज्ञानेश्वरी पढ़ी होगी पर केवल पढ़ी है। पढ़ने से बोध नहीं होता। जिसने कुछ भी पढ़ा नहीं, उसे भी बोध हो सकता है और जिसने सब कुछ पढ़ा है उसे थोड़ा भी बोध नहीं हो सकता।

बोध ऐसी स्थिति है कि वह अंदर से बंधी हुई चीज़ है। यह एक बद्ध स्थिति है। और पढ़ना यह चीज़ बाहरी है। ज्ञानेश्वरी जिन्होंने पढ़ी है ऐसे दो व्यक्तियों में, साथ में बिठाया तो वे एक दूसरे से वाद विवाद करेंगे। पर जिन्हें बोध हो गया ऐसे दो व्यक्ति साथ में बिठाये गये तो बहुत आनंद और एक दूसरे के साथ प्रमोद लेते हुए रहेंगे कि देखिये कितने वाइब्रेशन्स आ रहे हैं, कितना ठण्डा लग रहा है और कैसे क्या है। सभी केवल एक ही बात बोलेंगे। क्योंकि बोध केवल सत्य का ही होता है और ज्ञान सत्य का भी हो सकता है और असत्य का भी हो सकता है। उसे जानने के लिये कुछ भी अॅब्सोल्यूट नहीं है। इसीलिये मनुष्य को बोध होना ही चाहिये। और आत्मा से संबंध जुड़ने पर ही होता है। इसीलिये आत्मा से संबंध होना आवश्यक है।

आत्मा से संपर्क आने पर ही बोध होता है।

सुशिक्षित लोगों से मुझे बहुत परेशानी होती है। क्योकि 'कोई फलाना ढ़िकाना था, उनकी पुस्तक में ऐसा लिखा था माताजी।' इसका मतलब मैंने अब सारी की सारी लाइब्रेरी पढ़ने के लिये घूमना है। पर मैं मुख्य रूप से बताती हूँ कि अगर आपको बोध लेना है, तो सारी पुस्तकें आप जरा बाहर ही छोड़ दीजिये। यह सब आपके मस्तक में है। हृदय में कुछ भी नहीं। क्या आप हृदय के अंदर से सोच सकते हैं?

सहजयोग हृदय से पूछता है। तो आपने जितना कुछ पढ़ा है उसे बाहर छोड़ कर आईये। इसका अर्थ यह नहीं कि आपको उसे तिलांजलि देनी है। बुद्धि से मनुष्य ने यह जानना चाहिये कि इस बुद्धि से हम परमात्मा को नहीं जान सकते। बुद्धि बहुत ही छोटी पड़ती है। जब तक बुद्धि प्रबुद्ध नहीं होती, तब तक उस बुद्धि से आप परमात्मा को नहीं जान सकते। बुद्धि सीमित है। और अगर असीम को जानना है तो इस बुद्धि की सीमा तोड़नी पड़ेगी। यह अंतर अगर समझ में आ गया तो सहजयोग की महात्म्य, आप से भी परमात्मा को अधिक है और उसके लिये कुछ भी करने की तैयारी उसके पास निश्चित रूप से है।

अब अनचाहे निरर्थक प्रश्न लेकर कुछ भी विवाद नहीं करने है। अभी इन्होंने आपके सामने बताया कि आदिशक्ति है वगैरा वगैरा। यह देख कर सब के घोड़े हम पर सवार होने के लिये तैयार हो जाते हैं। भूल जाईये यह सब। अभी उसका कुछ भी अर्थ नहीं है। उसका अर्थ लगाना भी आपको आना चाहिये। क्योकि आदमी का मस्तक इतना विचित्र होता है। उसे सीखने के लिये हमें इतने वर्ष लग गये और आधुनिक मानव कैसा है यह सीखने के लिये हमने हमारे जीवन के पचास वर्ष खर्च किये। तब कहीं हमें सहजयोग जिसे कहते हैं, वह सहजयोग हम कर पाये, समझ पाये। मनुष्य के मस्तक में इतने परम्युटेशन्स और कॉम्बिनेशन्स होते हैं और उनके प्रकार इतने विक्षिप्त होते हैं कि एक को खोलने गये तो दूसरा बंद हो जाता है और दूसरे को खोला तो पहला बंद हो जाता है, ऐसी स्थिति है।

अब एक छोटीसी बात बताती हूँ। लंदन में एक महाशय बहुत सारा पढ़कर आये थे। वहाँ के लोगों को पढ़ने का खूब शौक है ही। पर अगर किसी एक शास्त्र को उन्होंने पढ़ने के खातिर लिया, तो वे इत्थंभूत, शुरू से अंत तक पढ़ लेते हैं। वैसे उन्होंने भी कुंडली का शास्त्र बहुत पढ़ा था। उसे पढ़ कर वे मेरे पास आये और बोले, 'हमने तो सुना है कि कुंडलिनी से इतनी पीड़ा होती है, उनकी कुंडलिनी अगर ऊपर आ गयी तो ऐसे लोग नाचने लगते हैं। फिर उनके शरीर पर फोड़े आते हैं। ऐसा होता है इ.इ.।' अब मैं यह देख ही रही हूँ और मैं यह सब जानती ही हूँ कि उसमें यह परेशानी होती है, वह तकलीफ होती है। बहुत कठिन कार्य है। सालो साल मेहनत करनी पड़ती है वगैरा वगैरा। अब मान लीजिये, कि एक स्त्री को पुरणपोळी अच्छी तरह से बनानी आती है। वह उसमें माहिर है। अगर किसी ने आ कर उसे बताया कि, 'पूरण पोळी बिल्कुल होती ही नहीं है। पुरणपोळी के लिये बहुत परेशानी होती है। उसके लिये ऐसा करना पड़ता है, आटा इस तरह गूंथना पड़ता है। उसके लिये ऐसा करना पड़ता है, तभी कुछ बन पाता है। हजारों सालों में कोई एकाध ही बना पाता है ऐसा मैंने पढ़ा है।' मान लीजिये कि किस पुरुष ने पुरणपोळी विषय पर पुस्तक लिखी है, तो फिर वह ऐसे ही होनेवाला है और उसका नतीजा भी ऐसा ही होने वाला है। और उसकी तकलीफ उस स्त्री को कि जिसे पुरणपोळी बनाना आता है। तो सीधे से कहना है, 'अजी, खाकर तो देखिये। बाद में बोलेंगे।' पर पहले से ही यह विवाद कि, 'यह बहुत कठिन है। ऐसा होता है। वैसा होता है। इसमें यह होना ही चाहिये।

उसमें मेंढ़क जैसे कूदना ही चाहिये। फलाने ने कहा, उधर, ठिकाने ने कहा।' इसका मतलब पुराने जमाने का यह तरीका सालों साला अभी तक मेरे सिर पर है।

तब लंदन में ही एक महाशय ने, जो हमारे शिष्य हैं, उन्होंने इसका उत्तर दिया। बहुत बड़ा। उस उत्तर में, मुझे ऐसा लगता है कि चव्हान ने भी आपको बताया है, उनके प्रश्न का उत्तर है। उन्होंने बताया कि कितना भी कठिन हो, फिर भी वह होता है और घटित होता है और हमने अपनी आँखों से देखा है। माताजी, के चरणों में आने पर हजारों लोगों की कुण्डलिनी का स्पंदन हमने अपनी आँखों से देखा है। तो हम आपकी बात मानने के लिये हम तैयार नहीं हैं। आपने पुस्तकें पढ़ी हैं पर हमने अपनी आँखों से देखा है। स्पंदन होते हैं, कुंडलिनी उठती है, ऊपर जाती है। तो उसका निष्कर्ष यह है कि, 'माताजी, कोई विशेष हैं।' यह आपने पक्का मान लेना चाहिये और यह बात आपने पूरी तरह से स्वीकार की और पकड़ ली तब आपको समझेगा। क्योंकि माताजी, मायाविनी हैं और वे कुछ माया खेलती हैं। और इसीलिये आपके ध्यान में नहीं आ रहा है। तो आप पार हो कर श्रीमाताजी को जान लीजिये।' तब कहीं वे चुपचाप पुरणपोळी खाने बैठ गये। मनुष्य के मस्तक के ऐसे प्रकार हैं।

परमात्मा ने ऐसा विचार नहीं किया था कि मनुष्य मस्तक से इतना विक्षिप्त, बिखरा बिखरा हो जाएगा। इसीलिये एक माता पर इस कार्य का उत्तरदायित्व दिया। क्योंकि माँ को ही इतना पेशन्स रहता है। माँ के बिना श्रीकृष्ण को भी यह करना असंभव था। वे अपना सुदर्शन चक्र चलाते। वे नहीं कर पाते। वे चुपचाप अपने चक्र चला देते या श्रीराम ने धनुष पर अपने बाण लगाये होते। उसके लिये माँ ही चाहिये, मेहनत करने के लिये, समझ लेने के लिये कि ये मेरे बच्चे हैं और उन्हें पार ले जाना है। उसके लिये मेहनत करनी चाहिये। कभी बोल देंगे, कभी चिल्लायेंगे, पर ये मेरे बच्चे हैं। जितनों को बचा सकते हैं उतनों को बचाना ही चाहिये यह माँ की ही समझ में आता है और ईश्वर उसे उतनी शक्ति भी देते हैं। बच्चे का जब जन्म होता है, तब माँ को कितनी भी वेदनायें हो वह भूल जाती है और उसका पहला सवाल रहता है, 'बच्चा ठीक है ना?' आप वहाँ सब थोड़े से प्रेम का अविष्कार देखते हैं। परंतु अनंत सागरों के सागर माँ ने पेट में डाल कर इस सहजयोग को निकाला है। और उसी प्रेम के कारण सहजयोग इतना कार्यान्वित है।

मुझे खुद को भी इतनी कल्पना नहीं थी। हमारे किसी भी जन्म में कभी भी ऐसा हुआ नहीं जिसको इस जन्म में लोगों ने समझ लिया। पुरानी बातें आप जानते हैं। किसी को संत कहा गया, कि पहले तलवारें तैयार हो जाती थी। या तो फिर उन्हें क्रूस पर चढ़ा दो या जहर का प्याला दो, उन पर सांप छोड़ दो ये सब बातें हुई उनको आप जानते ही है। किसी को संन्यासी कहना, किसी को और कुछ कहना। संतों का छल करना और उनको कष्ट वह सब अब बदल कर कलियुग में कैसी स्थिति आ गयी, उसे देखिये। आप सब कलियुग कहते हैं, पर मुझे तो अत्यंत आश्चर्य होता है कि इस आपाधापी के काल में ही आज मनुष्य को सहजयोग चाहिये। यह सब स्थिति ऐसी मंथन के समान तैयार हो गयी है। आज उसमें से मख्खन निकल आया है। सारी स्थिति ही ऐसी बनी है। ऐतिहासिक स्थिति बन गयी है। इस स्तर पर बातें आ गयी है कि सहजयोग की प्राप्ति होनी ही चाहिये। यशस्वी होना चाहिये। उसके लिये इतना ही कहना है कि आपने कुछ भी नहीं करना है। आपको कुछ भी मेहनत नहीं करनी पड़ेगी। हमें ही करनी पड़ेगी। आपका जन्म हो

गया और आप मानव शरीर में आ गये, इसके लिये आपने कौनसी मेहनत की है? अमीबा से आप मानव बन गये, क्या मेहनत की आपने? परमात्मा आपको मेहनत में डालना नहीं चाहते। आप आराम से रहिये। पर पार हो जाने के बाद जब आपकी मोटर शुरू हो जाएगी, तब आप उसका उपयोग कर सकते हैं। पार होने के बाद तो थोड़ीसी मेहनत करनी पड़ती है। क्योंकि भले ही सहजयोग में अत्यंत सहज, सुलभ और हज़ारों लोगों को इस का लाभ हो सकता है, तो भी यह एक अत्यंत सूक्ष्म स्थिति है। अर्थात् आप में से अंकुर निकल कर उसका वृक्ष बन जाये, उसका फल हो जाये और आपको आत्मबोध हो जाये, बहुत ही सूक्ष्म स्थिति आपमें घटती है। और वह सूक्ष्मता इतनी सूक्ष्म होती है कि आपके शरीर में किंचित भी जड़ता है तो वह सूक्ष्मता झट से उस जड़ता को पकड़ लेती है। इसीलिये पार होने पर ही स्थिर होना कठिन होता है और वह थोड़ीसी मेहनत करनी पड़ती है। स्थिर होने के बाद मनुष्य के ध्यान में आता है कि मैं कहाँ था और कहाँ पहुचं गया।

हमारे लंदन से बहुत सारे सहजयोगी यहाँ आये हैं। वैसे उधर इस प्रकार के अभी तीन सौ सहजयोगी हैं। इसके अलावा हमने हजारों लोगों को पार कर दिया है। पर ये संत इसमें या उसमें (मामूली चीज़ों में) नहीं हैं। उन्होंने अपने को पूर्ण रूप से स्थिर कर लिया है और इनमें से कुछ लोग तो छः महीने पहले हमारे पास आये हैं । और वे कहते हैं कि छः महिनों में हम कितने विद्वान हो गये। हमारी इतनी सारी शिक्षा है, शिक्षित, सुशिक्षित, डॉक्टर्स, इंजिनिअर्स हैं। पर वे कहते हैं, 'छः महिनों में हमने जो सीखा है, जो जान लिया है, जिसका हमें बोध हो गया है, माताजी वह कितना भव्य, प्रचंड है!' और उस बोध का एक सूक्ष्म तत्त्व है। अगर आपने समझ लिया तो आपके ध्यान में आ गया तो जानेंगे कि वह बहुत ही सूक्ष्म है। परमात्मा ने आपको अपने साम्राज्य में बुलाया है। परमात्मा आपको अपना साम्राज्य देना चाहते हैं। उस की तैयारी उन्होंने आप में कर के रखी है, आप में सब कुछ बनाकर रचा कर रखा है, आप में सब कुछ बिल्ट इन है। आप में केवल उसका तंतू, उसका अंकुर परमात्मा से मिल जाना चाहिये। उसके मिलते ही आपमें वह शक्ति साक्षात् बहने लगती है। उस शक्ति का अवलोकन आप कर सकते हैं, उसका कार्य आप देख सकते हैं और वह कितनी प्रचंड शक्ति है इस बात को आप जान सकते हैं। फिर भी आपको किसी ने तो भी, सब कुछ बताना तो चाहिये। हाथों में से ठण्डी वायु बहने लगती है।

बहुत लोगों ने मुझ से पूछा कि महर्षि रमण तो पार हो गये थे। रिअलाइज्ड़ सोल थे। फिर उन्हें कैन्सर कैसे हो गया। और माताजी, सहजयोग से कैन्सर ठीक होता है, तो फिर यह कैसा है? तब बताना पड़ता है कि उन्हें रिअलाइजेशन देते समय उन की माँ नहीं थी। उन्हें अपरोक्ष रूप में पार किया गया था। अगर उनकी माँ होती, तो उन्हें बताती कि सिंपथेटिक नर्वस सिस्टम क्या होती है, पैरासिंपथेटिक क्या होती है और उनका कुंडलिनी से क्या संबंध है। पर यह सब आपको बताने के लिये कोई तो होना चाहिये ना!

और उस दिन हम एक गुरु से मिलने गये थे। वे पानी में बैठते थे। मैंने उनसे पूछा कि, 'आप पानी में क्यों बैठते हैं?' उन्होंने कहा, 'सब के कारण मुझे जलन होती है माताजी! मैं क्या करूं? सबके पास से मेरे हाथों में आग आती है। इसीलिये मैं पानी में ही बैठता हूँ।' और उससे कितना कुछ हो गया है कि उनके पैर बिल्कुल छोटे हो गये हैं। और मछलियों ने उनके पैरों को कुतरने से, खाने से उन्हें बहुत पीड़ा होती है। फिर

मैंने उनको ठीक किया। उन्होंने मुझे पहचान लिया है। मेरे जन्म से ही वे जानते हैं कि मैं इस संसार में आयी हूँ। मैंने कहा, 'आप तो जानते हैं स्वयं को कैसे बचाना है।' उन्होंने कहा, 'इसीलिये मैं जंगल में रहता हूँ। मुझे ये लोग नहीं चाहिये। न मुझे किसी से मिलना है। सहजयोगियों को संसार से हटने की, दूर जाने की जरूरत नहीं है। क्योंकि वह भी चीज़ मुझे उन्हें बतानी है और वे समझते हैं। एक बार आप सीख गये कि बंधन कैसे लेना है, अपना बचाव कैसे करना है, तो इस संसार में रह कर ही, यहीं, जिस स्थिति में आप रहते हैं, तो आपकी माता, पिता, पत्नी, बच्चे इन सबको साथ लेते हुए यह योग यहीं घटित होता है। कुछ भी छोड़ना नहीं पड़ता, कहीं भी भागना नहीं है और यहीं सब लाभ हो जाता है।

उन लोगों के बारे में मेरा इतना ही कहना है कि उस समय में एकाध दूसरा ही पार हो जाता था। और उसे भी पूर्ण रूप से ज्ञान नहीं होता था। धीरे-धीरे टटोलकर क्या है यह समझ लेते थे। फिर भी उन्होंने अपनी पूरी स्वच्छता, साफसफाई कर ली थी। उसी स्वच्छता के कारण उनमें शक्ति का संचय अधिक है। हो सकता है कि अधिक शक्ति बह रही है, पर यह ज्ञान न होने के कारण खुद को कैसे बचायें? उस पर सवार कैसे होना है? यह सब ज्ञान उन्हें किसी ने दिया नहीं, बताया नहीं इसीलिये वे जंगल में दूर जा कर बैठते हैं। ऐसे अनेक लोग मुझे मिले हैं। हमारे सहजयोगियों से मिले हैं और सब मुझे कहते हैं, 'माताजी, आप बारह साल मेहनत कीजिये, उसके बाद हम आएंगे। आप चौदह साल मेहनत कीजिये। तब तो हम आएंगे, नहीं तो हम नीचे नहीं आएंगे।

पर फिर भी एक बात बिल्कुल सच है कि सहजयोग में एक बार स्थिर होने पर प्रचंड शक्ति आती है। इतनी प्रचंड शक्ति आ जाती है कि आश्चर्य लगता है कि हमारे हाथों में यह क्या बह रहा है! आप बिल्कुल सहज ही कुंडलिनी ऊपर कर सकते हैं, बड़ी सहजता से लोगों को पार कर सकते हैं। दूसरी बात यह है कि करीब-करीब दस वर्षों से, पिछले पाँच वर्षों में बहुत अनेक बड़े-बड़े लोग जन्म ले रहे हैं। मेरे ही घर में मेरी तीन नातियाँ और एक नाती है। चारों भी एक से एक बढ़ कर हैं। और उन्हें सहजयोगी की बारीक से बारीक चीज़ समझ में आती है। अब मेरी सबसे छोटी नातिन केवल ढ़ाई साल की है। उसके पास हमारी एक (सहजयोगिनी) लड़की गयी थी, अंग्रेज लड़की, उसने पूछा, 'अनुपमा, मुझे क्या है?' तो उसने झट से बता दिया। उसने थोड़ी थोड़ी अंग्रेजी सीख ली है अब, उसने उस लड़की से कहा, 'तुम्हारी लेफ्ट नाभि और लेफ्ट विशुद्धि है।' वह लड़की बिल्कुल आश्चर्यचकित हो गयी। इतनी छोटी सी लड़की ने तत्काल कैसे बता दिया? और झट से अंग्रेजी लड़की पर चढ़ कर बाधायें हटाना भी शुरू कर दिया। ये जो लोग हैं उन्हें बोध प्राप्त हो गया है। प्रबुद्ध लोग हैं। वे तो जन्म से ही सारा का सारा कुंडलिनी शास्त्र जानते हैं। ऐसे अनेक लोग इस दुनिया में जन्म लेंगे। और भी बहुत सारे जीव इस संसार में आने वाले हैं। अपने देश में तो विशेष लोग हैं।

दूसरे देशों में बच्चे विशेषता में जन्म नहीं लेंगे। उसका कारण यह है कि इतनी नर्कगति है सब ओर, पश्चिम के देशों में तो सारा नर्क ही उतर कर आया है। उस नरक में कोई सयाना सुजान जन्म नहीं लेगा। पागल आयेंगे या अतिदुष्ट लोग आयेंगे। और फिर वहाँ से आपकी ओर आयेंगे। आपके पूना में वहाँ से कुछ लोग आये हुए हैं। वे बिल्कुल निम्न स्थिति वाले लोग हैं। वहाँ भी बड़े-बड़े साधु-संतों ने जन्म

लिया है, वे सहजयोग को प्राप्त कर लेंगे। बहुत बड़े साधु-संतों ने जन्म लिया है। अब अपने देश में यह योगभूमि और महान भूमि होने के कारण बड़े-बड़े संत जन्म लेंगे। पर उनके बारे में भी आपको बोध होना चाहिये कि ये किस प्रकार के बच्चे हैं! इनकी क्या विशेषता है? वे क्या करते हैं? मतलब हम अब एक दूसरी ही दुनिया में जाने वाले हैं। यह हमें अंदर तक के दिख रहा है। आप जानते हैं कि इस में इलेक्ट्रिसिटी जाती है, इसीलिये उसमें लाईट आता है। ये सारा मृत है। इलेक्ट्रिसिटी जीवंत कार्य तो नहीं है। अब हमने अगर यह खंबा बनाया, तो एक पेड़ नष्ट हो गया। उसी पेड़ से तो यह खंबा बनाया गया है। जीवंत कार्य तो यही है कि मनुष्य ने कभी जीवंत कार्य किया है, तो वह है कि कुंडलिनी का जागरण करना। उत्क्रांति की यह आखरी सीढ़ी है। और इन वाईब्रेशन्स के कारण इतने सारे जीवंत कार्य हो रहे हैं। मान लीजिये कि किसी मनुष्य को एक बीमारी हो गयी है। अब वह बताता है कि उसे बहुत परेशानी है। 'माँ, मुझे बहुत तकलीफ है, बचपन से ही!' समझ लीजिये कि इस घर की नींव मजबूत, पक्की नहीं है। तो कितनी भी मेहनत की तो भी हम इस घर को मजबूत नहीं बना सकते। मनुष्य का भी वैसे ही हो सकता है। बचपन से अगर वह खराब हो गया है, अगर उसका मूलाग्र ही बिगड़ गया होगा और वह पूर्ण रूप से खराब हो कर निरर्थक हो गया होगा, तो हम उसे किस तरह से ठीक करेंगे? पर सहजयोग ही ऐसा है। बिल्कुल नन्हे बच्चे से ले कर वह इतनी जीवंत क्रिया है, और वह केवल मनुष्य पर ही हो सकती है। क्योंकि वह भी जीवंत प्राणी है। और हम सब निकाल कर फेंक देते हैं।

मतलब हमने ऐसे लोग देखे हैं कि जो इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं। हम सिंगापूर गये थे। वहाँ एक मुसलमान आदमी था। वह बिगड़ कर इतना जर्जर हो गया था कि उसकी पत्नी उसे लेकर आयी थी और उसने कहा कि, 'माताजी, आप इसका कुछ न कुछ ठीक कर दीजिये, मतलब शराब पीना इ.। उसे कुछ भी नहीं था। बाकी सब प्रकार से वह दुर्वर्तन करता था और उसके फॅमिली का सर्वनाश हो गया था। पर सहजयोग में पार होने के बाद वह इतना कुछ बदल गया कि छः महिनों के बाद लोग कहने लगे कि ये वही महाशय हैं यह ध्यान में भी नहीं आता।

उसका कारण यह है कि उससे आपको अपनी आत्मा की पहचान होती है। जब आत्मा के स्पन्दन आने शुरू होते हैं तो वह सभी ओर फैलता है। और आज तक हमारे बिगड़े हुए यंत्र, चाहे मन के हो या बुद्धि के हो, या शरीर के हो, सुचारू रूप से चलने लगते हैं। धीरे-धीरे ऐसा मनुष्य पूरी तरह बदल जाता है। और वह बदला हुआ मनुष्य मुख्य रूप से बहुत संतुष्ट होता है। संतुष्ट होते हुए भी उसमें प्रचंड शक्ति का एक वेग बहता रहता है और वह शक्ति का वेग प्रेम की शक्ति का होता है। कुंडलिनी प्रेम की शक्ति है तो वह आपको कैसे दुःख दे सकती है? वह आपकी माँ है। उसे परमात्मा ने खास आपके लिये, प्रत्येक व्यक्ति को बिल्कुल भिन्न भिन्न शक्ति दी है। केवल आपके लिये ही आप में रखी है, उससे आपकी उत्क्रान्ति होने वाली है। ऐसी शक्ति आपको कभी दुःख दे सकती है क्या? क्या आपकी माँ ने आपको कभी दुःख दिया? यह कुंडलिनी शक्ति आपकी माँ की भी माँ है। वह सभी की माता है और आपकी विशेष रूप से माँ है। जो केवल मातृत्व है वह आपको कैसे पीड़ा देगी? और परमात्मा ने भी ऐसी योजना कभी बनायी होगी क्या? जो इतने परम

दयावान, कृपाशील और प्रेममय हैं, क्या वह आपके लिये ऐसी व्यवस्था करेंगे कि अगर आपने कुंडलिनी जागृति मांगी, तो बिच्छू जैसे लगेगा, या बिच्छूने काट लिया ऐसे लगेगा, कि अंदर से कोई मेंढ़क निकल गया, ऐसे लगेगा! एक महाशय तो मेंढ़क जैसे फुदकते थे। मुझे कुछ भी मालूम नहीं था। मेरे प्रोग्राम में कोल्हापूर आये और मेरी तरफ ऐसे पैर लंबे कर के बैठ गये। सभी ने कहा, 'अजी कम से कम माताजी की तरफ पैर फैलाकर मत बैठिये।' तो बोले, 'अजी, मुझे ऐसा ही बैठने दीजिये। मेरी कुंडलिनी जागृत हो गयी है और मैं मेंढ़क के समान कूदता हूँ। अगर इस तरह से (बिना फैलाये) पैर रखे तो मैं मेंढ़क जैसे कूदने लगूंगा।'

अब एक सीधी बात ध्यान में रखनी है कि जो मानव अति मानव होने वाला है, उसे कोई कभी मेंढ़क बनायेगा? तो अब आप क्या मेंढ़क, खटमल होने वाले हैं? कम से कम अपने मस्तकों को तो भी गिरवी नहीं रखना है। पर ऐसे स्थान पर तो लोग मस्तक पूरी तरह गिरवी रख कर जाते हैं। केवल हमारे सहजयोग में वादविवाद करने में कुशल, बिल्कुल कुशल होते हैं। हमारे लंदन में एक बार एक लामासाब आये। उनके पास एक लड़की जाती थी। उसने मुझे बताया कि वह उसे भूखी रखता था। उन्हें खाना देने का ही नहीं, मतलब उन्हें बिना मिर्च नमक का खाना देना। अर्थात् खाने के संबंध में उन्हें सन्यास लेने के लिये ही मजबूर करना तो आपका कल्चर ही ऐसा है। आप कितनी भी लड़कियाँ रखें, लड़के रखें तो भी कोई हर्ज नहीं। केवल खाने के बारे में आपको भूखे मारना! और वे बेचारे ऐसी अवस्था में उसके सामने आ गये कि उन्हें कहना कि, 'तुम मेरे लिये हजार बार झुकते रहो।' और जब वे शुरुवात करते हैं तो वे बेचारे जानते भी नहीं कि उन में कुछ भूत-वूत डाल दिये हैं। उसके बाद उनकी ऐसी दशा कर डालते हैं कि, 'सब कुछ, सब पैसे तुम हमारे सामने हमें दे दो।' ये पढ़े-लिखे लोग, खुद को बुद्धिमान कहलाने वाले, सारी दुनिया पर राज करने वाले इतने मूर्ख कैसे हैं? मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि चाहे जितने पैसे उस आदमी को देते हैं। एक किसम का पत्थर रहता है। उन्होंने बताया कि जब तक तुम मुझे इस प्रकार का पत्थर नहीं देंगे, तो मैं कुछ करने से रहा। वह पत्थर मुझे चाहिये और उस पत्थर पर ही मैं बैठूंगा, उठूंगा और मेरा सब कुछ हो जाना चाहिये। उन्होंने कहीं से वह पत्थर लाया। वह पत्थर ईरान में मिलता है। और वहाँ से वह पत्थर लाया और उस पत्थर को उस आदमी के नीचे वहाँ रखा।

अब ये सब आ गये, तिब्बत के लोगों को तो उन्होंने जैसे केवल भुन कर खाया था। वहाँ से यहाँ आये और इन लोगों के पास से पैसा ले कर बैठे हैं, परोपजीवी, पैरासाईट बन कर! और लोग उन्हें इतना पैसा क्यों देते हैं? मतलब वे कैसे करते हैं और क्या करते हैं? ये बुद्धिवादी लोग जब मूर्ख बनते हैं तो इतनी अधिक मात्रा में क्यों मूर्ख बनते हैं, यह बात मेरी समझ में ही नहीं आती। शायद मनुष्य में अहंकार आता है ऐसा मुझे लगता है। बुद्धिवादी व्यक्ति में अहंकार आता है। और अगर अहंकार अधिक बढ़ गया तो उस मनुष्य का बंदर बन जाता है।

एक बार एक गाँव के कुछ लोग किसी मिनिस्टर से मिलने गये। उनके जो प्राइवेट सेक्रेटरी थे उन पर अहंकार चढ़ गया था। मतलब बंदर जैसे ये महाशय इधर से उधर कूद रहे थे। सब से वे कुछ बोल कर बता रहे थे। तब लोगों ने उनसे कहा कि, 'आपका कहना समझ में नहीं आया। आपके बारे में बताईये।' उन्होंने हिंदी में कहा, 'आपको मालूम नहीं मैं पीए हूँ।' पीए का मतलब पिये याने जिसने शराब पी के रखी है।

लोगों ने कहा, 'अच्छा, अच्छा, अब मालूम हो गया। अब जा रहे हैं हम।' उस अहंकार के संबंध में रामायण में भी एक सुंदर कहानी है।

नारदजी को एक बार अहंकार हो गया। वे माया नगरी में गये और कैसे मूर्ख बन गये, वैसा ही मुझे दिख रहा है। अहंकार से मनुष्य अत्यंत मूर्ख बना रहता है। अगर उसे कोई मूर्ख बनाने वाला आया, तो वह मूर्ख बनता है और उसे सब कुछ, जिसे हम सुज्ञता या सुज्ञान होना कहते हैं, वह सब इस आदमी को अर्पण कर देता है। तो किस कारण से ये लोग ऐसे क्यों हो गये और ऐसा व्यवहार क्यों करते हैं यह बात अपने आपही आपके ध्यान में आयेगी।

पर सहजयोग में तो आपको पूर्णत: स्वतंत्रता है। वह बहुत बड़ी बात है। आप पूरी तरह से स्वतंत्र हैं और स्वतंत्र हैं इसलिये मुझ से वादविवाद करते हैं। अब उस बात को मैं बहुत मानती हूँ और मुझे अच्छा भी लगता है कि लोग स्वतंत्रता से मेरे पास आते हैं। मुझसे स्वतंत्रता से विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। इतना ही नहीं मुझ से वादविवाद करते हैं, लड़ते हैं, सब कुछ करते हैं। पर उनसे थोड़ी सी गलती यह होती है कि व्यर्थ ही समय क्यों गँवाना है? अगर हम कह रहे हैं कि कुंडलिनी वरदान लो तो लेना है। क्योंकि हमें आपसे क्या लेना है? हम तो इलेक्शन में खड़े नहीं हैं। हमें आपसे पैसा भी नहीं चाहिये। हमें न इश्तिहार चाहिये न बड़प्पन। हमें कुछ भी नहीं चाहिये। अगर हम कह रहे हैं कि हम देने के लिये आये हैं तो ऐसा विचार करना चाहिये कि कहीं तो भी एकाध कोई मनुष्य हो सकता है कि जिसे कुछ भी न लेते हुए भी देना है। अगर इतना थोड़ासा सोच लिया तो बुद्धिजीवी व्यक्ति के भी ध्यान में आयेगा कि यह सब प्रेम का अंश है। जब मनुष्य प्रेम में पूरी तरह रंग जाता है तो इसका विचार नहीं करता कि इसमें मेरा क्या फायदा होगा? क्या लाभ होगा? उसे बस प्रेम देने में ही मजा आता है और वह प्रेम देते रहता है। तो हममें प्रेम का जो थोड़ा सा अंश है, उसे हम भूल गये हैं। बचपन में माँ ने केवल प्रेम से ही हमसे व्यवहार किया है। कितने सारे लोगों ने हमें बिना किसी अपेक्षा से हमें प्रेम दिया है।

यह भारत प्रेम की भूमि है। हमें कितना कुछ प्रेम मिला है। हमारे मित्रों ने, हमारे पिता ने, माता ने और समाज ने भी हमें कितना सारा प्रेम दिया है। अगर उसका स्मरण हुआ, तो सहजयोग अधिक मात्रा में घटित हो जाएगा।

इस प्रकार सहजयोग के बारे में मैंने आपसे थोड़ा बहुत कहा है। पर यह विषय इतना बड़ा और विस्तृत है कि उसमें कुंडलिनी कहाँ होती है और वह कैसे ऊपर चढ़ती है यह मैं कल आपको बताऊंगी। और जो बहुत बड़ा है, महान है उस सब को आप जान लेंगे। अगर सब कुछ बताने बैठ गये तो उसके लिये बहुत दिनों की जरूरत है। फिर पूना में किसी समय कम से कम महीने तक रहूंगी, आपके साथ, तब कार्य घटित हो जाएगा। अब वर्तमान में तो मुझे उस नर्क में ही रहना है। क्या करें? तकदीर में होता है वैसा ही लेना पड़ता है। मैं वहीं मेहनत कर रही हूँ। फिर भी मुझे पूरी आशा है कि एक दिन इस पूना में मैं लौट कर आऊंगी और आप सबको इस संबंध में अधिक जानकारी दूंगी। अभी भी यहाँ जो सहज योगी हैं, उन्हें बहुत जानकारी है, उन्होंने बहुत कुछ पाया है। बहुत मेहनत की है।

नाभि चक्र

..... तृतीय चक्र नाभि चक्र कहलाता है। नाभि के पीछे इसकी दस पंखुरियाँ हैं। यह चक्र किसी भी चीज़ को अपने अन्दर बनाये रखने की शक्ति हमें देता है। शारीरिक स्तर पर यह सूर्य चक्र में सहायक है।

सहजयोग पुस्तक से

..... नाभि चक्र पर श्री लक्ष्मी-नारायण का स्थान है। श्री लक्ष्मी-नारायण जी का स्थान जो है हमें धर्म के प्रति रुचि देता है। उसी के कारण हम धर्मपरायण होते हैं, उसीसे हम धर्म धारण करते हैं। कार्बन में जो चार संयोजकतायें हैं वे भी इसी धर्म धारणा की वजह से हैं।

प.पू.श्री माताजी, मुम्बई, २२.३.१९७९

..... आपका नाभि चक्र यह सुझाता है कि आप अभी तक भी भौतिकता में फँसे हुए हैं। छोटी-छोटी चीज़ों में भी हम भौतिकवादी होते हैं। यह दुर्गुण सूक्ष्मातिसूक्ष्म होता चला जाता है। .....नाभि चक्र अत्यन्त व्यक्तिवादी है, अतिव्यक्तिवादी या यह सबकी व्यक्तिगत चीज़ है।

प.पू.श्री माताजी, १८.१.१९८३

..... अगर आप चालबाज़ी करते हैं या करने की कोशिश करते हैं तो आपका नाभि चक्र क्षतिग्रस्त होता है और आप अपनी चेतना खो बैठते हैं।

..... पैसे के मामले में आपके सहजयोग के प्रति कैसे आचरण हैं, यह बहुत महत्वपूर्ण बात है .....क्योंकि इससे नाभि खराब हो जाती है।

प.पू.श्री माताजी, ४.२.१९८३

..... बाईं नाभि को यदि उत्तेजित कर दिया जाये जैसे हर समय दौड़ते रहने से, उछल-कूद से, उत्तेजना से, तो उत्तेजित बाईं नाभि के कारण रक्त कैन्सर हो सकता है।

..... जो औरतें पति से दुर्व्यवहार करती हैं, उसकी उपेक्षा करती हैं, उन्हें भयानक आत्माघात (Siriosis), मस्तिष्क घात, पक्षाघात, शरीर का पूर्ण डिहाइड्रेशन हो सकता है। बाईं नाभि बहुत महत्वपूर्ण है।

प.पू.श्री माताजी, सेंट जार्ज, १४.८.१९८८

..... नाभि चक्र में यदि खराबी हो तो सभी प्रकार के पेट के रोग, पेट का कैन्सर तक हो सकता है। इस चक्र को खराब करने वाली बुरी आदतें जैसे मद्यपान, नशा सेवन छूट जाता है और तब वह सत्य साधना की ओर निकल पड़ता है, धन तथा सांसारिक वस्तुओं की अधिक चिन्ता नहीं करता।

प.पू.श्री माताजी

..... नाभि चक्र में हमारे अन्दर देवी लक्ष्मी जी बसती हैं। जब हमारी कुण्डलिनी नाभि पर आ जाती है तो हमारे अन्दर वो जाग्रति आ जाती है जिससे लक्ष्मी जी का स्वरूप हमारे अन्दर प्रकट हो जाता है।

प.पू.श्री माताजी, धर्मशाला, ३१.३.१९८५

..... आपके लक्ष्मी तत्व की जाग्रति के बगैर आपके अन्दर लक्ष्मी नहीं आयेंगी, हाँ पैसा आ जाएगा, ...केवल लक्ष्मी तत्व की जाग्रति से ही आप ऐसे लक्ष्मी पति हो सकते हैं जो समाधान में, इतने संतुलन में खड़ी हैं, वो कमल पर ही खड़ी रहती हैं - इतनी सादगी से, इतनी मर्यादा से वो रहती हैं। (यही गुण आप में जाग्रत हो जाते हैं)

..... इस देश का लक्ष्मी तत्व बिल्कुल जाग्रत हो सकता है पर सौष्ठव और उनका गौरव समझते हुए। अगर हम उनका गौरव न समझे और व्यर्थ की चेष्टाओं से चाहें कि लक्ष्मी (पैसा) इकठ्ठा कर लें तो कभी हमारे अन्दर लक्ष्मी तत्व जाग्रत नहीं हो सकता।

..... आप जान लीजिए कि पैसे को झेलने के लिये भी लक्ष्मी तत्व जरूरी है। मनुष्य को जान लेना चाहिये कि हमारे अन्दर परमात्मा ने स्वयं साक्षात् लक्ष्मी का स्थान (नाभि में) रखा है, वो हमारे अन्दर बसी हुयी है, सिर्फ उनकी जाग्रति मात्र करनी है।

..... अच्छे मार्ग-सन्मार्ग में रहना है।

प.पू.श्री माताजी, १५.३.१९८४

अन्तर्जात गुण

१. संतोष - विकास प्रक्रिया में आप यदि उस अवस्था तक पहुँच जाते हैं जहाँ आप नाभि चक्र के ऊपर उठ जाते हैं, यानी नाभि चक्र को पार लेते हैं तो पैसा अधिक महत्वपूर्ण नहीं रह जाता..... संतोष प्राप्त हो जाता है।

प.पू.श्री माताजी, १८.८.२०००

..... संतोष मतलब जो मिला खूब मिला, अब और कुछ नहीं चाहिये। .....एक ऐसा सहजयोगी जिसके पास कुछ भी न होते हुए भी वो मौज़ में रहता है, बादशाह होता है .....ऐसा मनुष्य अपने में तृप्त होता है। .....पैसे से कभी भी संतोष नहीं मिलेगा, ये जड़त्व स्थूल है .....जड़ वस्तु से हमेशा जड़ता आती है और जड़ता तो मनुष्य में आदतें डालती है।

प.पू.श्री माताजी, बम्बई, २४.९.१९७९

..... पूर्ण संतोष ही व्यक्ति को वह शांति प्रदान कर सकता है जिसको प्राप्त करने के पश्चात् व्यक्ति भौतिक चीज़ों के पीछे भागना छोड़ देता है।

प.पू.श्री माताजी, गणपतिपुले, २५.१२.२००२

..... आध्यात्मिकता अपने आप में आत्मसंतोष प्रदायी होनी चाहिये, आपमें यदि आध्यात्मिक गुण है तो आप 'आत्म-सन्तुष्ट' हैं और आपके अन्दर का यह आत्म-संतोष आपको उस आनन्द के सागर तक ले जाएगा जिसके बारे में मैं आपको बताती रही हूँ और जिसका वर्णन सभी धर्मग्रन्थों में किया गया है .....निरानन्द अर्थात् आनन्द की वह अवस्था जिसमें किसी अन्य वस्तु की आवश्यकता न हो (पूर्ण संतुष्ट)।

प.पू.श्री माताजी, कबैला, २८.७.१९९६

..... मानव को चाहिये कि पूर्ण संतुष्टि प्राप्त करे। पूर्ण संतुष्टि प्राप्त किये बिना वह अपने किसी भी प्रयत्न में पूर्णता को नहीं पा सकता। जब तक मानव इस अवस्था को नहीं पा लेता परमात्मा स्वयं भी चैन से नहीं बैठेंगे, क्योंकि कौन चाहेगा कि अपनी ही सृष्टि को नष्ट कर दे? हज़ारो-हज़ारो वर्षों में संतुष्टि की यह अवस्था आयी है।

प.पू.श्री माताजी, 'महावतार', १९८० से उद्धृत

२. औदार्य (दानत्व का भाव) - दानत्व वाला आदमी जो होता है वो अपने लिये कुछ भी संग्रह नहीं करता, दूसरों को बाँटता रहता है, देता रहता है, देने में ही उसको आनन्द आता है, लेने में नहीं .....वो यह बताता नहीं, जताता नहीं, दुनिया को दिखाता नहीं कि मैंने उसके लिए इतना कर दिया, वो कर दिया, एकदम चुपके से करता है।

प.पू.श्री माताजी, नई दिल्ली, चैतन्य लहरी २००४

२. करुणा - अन्य सहजयोगियों के प्रति सहृदयता की संवेदनशीलता आप में विकसित होनी चाहिये।

.....आपके अन्दर यदि किसी के लिये करुणा भाव है तो नि:सन्देह यह कार्य करता है। ....मेरी करुणा मात्र मानसिक ही नहीं है, यह तो बहती है और कार्य करती है। आप भी ऐसे बन सकते हैं। मैं चाहती हूँ आप मेरी सारी शक्तियों को पा लें, परन्तु करुणा सर्वप्रथम है।

प.पू.श्री माताजी, आस्ट्रेलिया, २६.२.१९९५

..... श्री लक्ष्मी जी और सभी देवियाँ महिलायें है, इनकी विशेषता क्या है? अपना स्वभाव एवं गुणों का आशीर्वाद लोगों को देना।

प.पू.श्री माताजी, काना जोहरी, २.७.२०००

(ये गुण हैं गांभीर्य, तेजस्विता, उदारता, दान, निष्ठा, सेवा, गरिमा, अतिथि सत्कार, एक शान पर झूठा घमंड नहीं।)

नाभि-चक्र के नियंत्रक देवता 'श्रीलक्ष्मी-नारायण' की विशिष्ट भूमिका

मनुष्य के रूप में आपका जो विकास है वह 'लक्ष्मी-नारायण' के तत्व से हुआ है। विष्णु तत्व से ही यह कार्य होता है। .....विष्णु ने आप जानते हैं कि दस अवतार लिये हैं, उनमें से नौ ले चुके हैं, दसवाँ आने वाला है। अवतारों में उनके अधिकतर अवतार विकासशील है। वे पहले मछली रूप में आये, उसके बाद कछुआ बने। इस प्रकार विकास की अलग-अलग अवस्थायें लक्ष्मी-नारायण की विकासशीलता की द्योतक हैं।

प.पू.श्री माताजी, बम्बई, २२.३.१९७९

..... धर्म का तत्व हमें 'विष्णु जी' से मिलता है।

..... विकास के दौरान श्री विष्णु ने भिन्न- भिन्न रूप लिये, उन्होंने अपने आस-पास कई पैगम्बरों का वातावरण उत्पन्न किया ताकि वे संसार में धर्म की रक्षा कर सकें .....श्री विष्णु जी ब्रह्माण्ड के रक्षक हैं। .....संरक्षक का आधार धर्म था।

प.पू.श्री माताजी, कबैला, २८.४.१९९४

..... लक्ष्मी तत्व की जाग्रति से आदमी को 'संतोष' आता है, उसे संतोष आ जाता है। जब तक आदमी को संतोष नहीं आयेगा वह किसी चीज़ का मज़ा नहीं ले सकता।

.....संतुष्ट करना लक्ष्मी जी का गुण है। लक्ष्मी जी से आशीर्वादित होने का अर्थ है संतुष्ट होना। आप जान लेते हैं कि धन सत्ता तथा अन्य बेकार की चीज़ों के पीछे मारे-मारे फिरना मूर्खता है।

..... आनन्द की खोज तो नाभि चक्र से ही शुरू होती है। इसी खोज के कारण आज हम अमीबा से इंसान बने हैं और इसी खोज के कारण हम परमात्मा को खोजते हैं, हम इन्सान से अतिमानव होते हैं, परमात्मा को

पहचानते हैं, आत्मा को पहचानते हैं, इसी खोज के कारण। इसलिये लक्ष्मी तत्व बहुत ही जरूरी चीज़ है। .....इस लक्ष्मी तत्व को एक उच्च तत्व, एक स्वतंत्र व्यक्तित्व या हम कह सकते हैं - महालक्ष्मी तत्व सम्पन्न होना होगा।

प.पू.श्री माताजी, चैतन्य लहरी, नवंबर-दिसंबर २००४

१. श्री विष्णु - धर्म एवं विकास के आधार

हमारे अन्दर जो दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है वह है विष्णुतत्व। विष्णुतत्व से हमारा धर्मधारण होता है जो हमारे नाभिचक्र में प्रभावित है। नाभि में हमारे अन्दर धर्मधारणा होती है, जैसे जब आप अमीबा थे तो खाना-पीना खोजते थे, जब आप अमीबा से और ऊँचे इंसान की दशा में आ गए तब आप अपनी सत्ता खोजते हैं। उससे आगे जब आप जाते हैं, तो आप परमात्मा को खोजते हैं। आपके अन्दर ये धर्म है कि आप परमात्मा को खोजें। ये मनुष्य का धर्म है, जानवर नहीं खोज सकते और कोई भी प्राणी परमात्मा को नहीं खोज सकता। ये मनुष्य का धर्म है। इसके दस अंग हैं और ये धर्म का तत्व हमें विष्णु जी से मिलता है।

अब बहुत से लोग सोचते हैं कि विष्णु जी से हमें पैसा मिलता है और विष्णु जी से हमें लाभ होता है, लेकिन ये बात नहीं है कि उनसे सिर्फ पैसा ही मिलता है, क्योंकि ऐसी भावनाएँ हमारे अन्दर बसी हुई हैं कि विष्णुजी हमारे लिये जितना भी क्षेम है वो देते हैं और बाकी कुछ नहीं। सारे क्षेम से क्या लाभ होता है, आप ये देख लीजिये और समझ लीजिए।

अब जैसे एक मछली है, जब उसने पूरी तरह से जान लिया कि हम इस समुद्र से पूरी तरह से संतुष्ट हैं, उसने उस संतोष को पा लिया, तब उसे विचार आता है कि समुद्र को तो सब देख लिया, इसका तो धर्म जान लिया, अब हमें जानना है कि जमीन का धर्म क्या है? तो अब वह अग्रसर होती है। कोई भी मछली अवतरण जो हुआ वो सिर्फ ये हुआ कि मछली उसमें से बाहर आयी-अब जब वो मछली बाहर आयी-एक ही मछली-वो ही अवतार-जब पहले बाहर आयी तो बहुत सारी मछलियों को अपने साथ खींच लायी, यह सीखने के लिये कि धर्म क्या है। कौन सा धर्म? इस जमीन का धर्म क्या है? पहले इस जमीन के धर्म जानो। इसलिये रेंगते हुए वे मछलियाँ बाहर आयीं।

अब दूसरा धर्म सीखने की बात आ गयी। पहले पानी का धर्म सीखा, अब जमीन का धर्म सीखने लगे। तो रेंगते-रेंगते इन्होंने देखा कि पेड़ भी हैं, इन पेड़ों से पत्ती खा सकते हैं। क्षुधा (भूख) पहली चीज़ होती है जिससे कि आदमी खोजता है, खोजने की शक्ति नाभि में है। आपको इच्छा होती है कि किसी तरह से अपनी क्षुधा को तृप्त करें। तो देखा कि पेड़ हैं, पेड़ के लिये जरूरी है कि भई जो हमारा शरीर है वह ऐसा ही रेंगता रहे ताकि जो पेड़ पर चीज़ें हैं वो हम खा सकें।

धीरे-धीरे उसने अपनी ओर से चार-पाँच इकट्ठे कर लिये, फिर कछुआ हो गया। अब कछुआ होने के

बाद उसने देखा कि ये तो ऊँचे-ऊँचे पेड़ हैं, उसको कैसा करें। फिर अपनी क्षुधा शान्त करने के लिये उसने सोचा चलिये जरा और ऊँचा हो जाएँ, इस तरह से करते-करते वह जानवर हो गया और जानवर होने के बाद उसने सोचा कि अब ज़रा गर्दन उठा कर देखें। जब उसने गर्दन उठाई फिर वह मनुष्य बना, तो वो धीरे-धीरे मनुष्य बना। अब जब मनुष्य बना तो हमारे अन्दर जो ये धर्म हैं, कि हम धर्म की धारणा करते चले गये।

तो जैसे कि मछली का धर्म था कि वो पानी में तैरती थी, उससे बाद कछुए का धर्म था कि वह रेंगता था ज़मीन पर, उसके बाद जो जानवर थे उनका धर्म था कि वो चार पैर से चलते थे लेकिन उनकी गर्दन नीचे थी। फिर थोड़े-थोड़े जो थे उन्होंने अपनी गर्दन ऊँची कर ली, उसके बाद उन्होंने सारे शरीर को खड़ा कर लिया और दो पैरों पर खड़े हो गये। ये मनुष्य का धर्म है कि वो दो पैरों पर खड़ा है और उसकी गर्दन सीधी है।

ये सब तो बाह्य में हुआ, बहुत ही ज्यादा जड़ तरीके से, आप समझें। लेकिन तत्व में मनुष्य ने क्या पाया, क्योंकि हर बार जब आप कोई सा भी काम करते हैं तो तत्व भी उस कार्य में उसी तरह से प्रभावित होना चाहिये।.....

.....मनुष्य के अन्दर का जो तत्व है वो एक नया विकसित तत्व है और परमात्मा को खोजना है। इसलिये मनुष्य का प्रथम तत्व है, वो है परमात्मा को खोजना। जो मनुष्य परमात्मा को नहीं खोजता है वह पशु से भी बदतर है और जब वह परमात्मा को खोजने निकला तब उसका नाभि का चक्र पूर्णतत्व हो गया और जब वह परमात्मा को खोजने लगा तब उसने देखा संसार की सारी सृष्टि बनी हुई है, हो सकता है इन तारों में, ग्रहों में और इन सब चीजों में परमात्मा हो। उसकी तरफ उसकी दृष्टि गयी। तब उसे हिरण्यगर्भ याद आया जिन्होंने वेद लिखे। अग्नि आदि पाँच तत्व हैं, उसकी ओर उसका चित्त गया, उसको जानने की उन्होंने कोशिश की, उनको जगाते हुए उन्होंने जो कुछ यज्ञ हवन आदि करने थे वो किये और ब्रह्मदेव-सरस्वती की अर्चना की।

सब कुछ करने के बाद उन्हें लगा कि सब कुछ तो हम जान गए। मानव फिर ज्ञान से विज्ञान की ओर गया और अपने लिये विनाश का सारा सामान बना लिया और हाथ लगी निराशा और असंतोष। इससे बचने के लिए नशे और बुराईयों का सहारा लिया। कहने का मतलब यह है कि अगर तत्व में ही परमात्मा खोजना सब बात है तो आप समझ सकते हैं कि विज्ञान के रास्ते आपको परमात्मा नहीं मिलेगा। विज्ञान के रास्ते आपने जो कुछ पा लिया है, वह भारी ज्ञान पा लिया है, उससे किसी ने आनन्द को नहीं पाया।

प.पू.श्री माताजी, १५.०२.१९८१

.....तो अब मेरी बात समझें, मैं बता रही हूँ। श्री विष्णु जी ब्रह्माण्ड के रक्षक हैं। संसार की सृष्टि करते समय यह जरूरी था कि एक रक्षक की भी सृष्टि की जाये नहीं तो यह संसार नष्ट हो जाता । यदि मानव को अरक्षित छोड़ दिया जाता तो स्वभाववश उसने इस संसार का कुछ भी कर दिया होता। विकास के दौरान श्री विष्णु ने भिन्न-भिन्न रूप लिये। उन्होंने अपने आस-पास कई पैगम्बरों का वातावरण उत्पन्न किया ताकि वे संसार में धर्म की रक्षा कर सकें, अतः संरक्षण का आधार धर्म था। इस धर्म में जो कुछ भी स्थापित करना था वह संतुलन से स्थापित करना था, अति में जाना तो मानव की आदत है।

.....संतुलन स्थापित करना धर्म का पहला सिद्धान्त है, बिना संतुलन के व्यक्ति उत्थान नहीं कर सकता।

प.पू.श्री माताजी, २५.४.१९९४

श्री विष्णु की विकास प्रक्रिया से किस प्रकार सब कुछ विकसित हुआ, हमें इसका ज्ञान होना चाहिये। श्री विष्णु के दस अवतार हैं। श्री विष्णु बढ़कर विराट ब्रह्माण्ड रूप धारण करते हैं। हमारे अन्दर विष्णुतत्व की स्थापना अति सुन्दर रूप में है। इसी के परिणामस्वरूप हम घर, सत्ता, प्रेम, बच्चे तथा अन्य सभी प्रकार की वस्तुएँ पाना चाहते हैं। विकास प्रक्रिया, जिसके कारण हम विकसित हुए विष्णुतत्व की सबसे बड़ी देन है।

.....देवताओं का विकास भी मानववत ही हुआ, जैसे विष्णु जी मछली, कछुआ, वामन अवतार के बाद यूनानी पौराणिक कथाओं के पुरुषोत्तम, जीज़स के रूप में विकसित हुए। फिर वे श्री राम के रूप में आये। वे अत्यंत विवेक पूर्ण, सतर्क सावधान, मर्यादित तथा सुन्दर व्यक्ति थे। अपनी सारी शक्तियों को जानते हुए भी उन्हें अपना विष्णु अवतार भूलना पड़ा, अर्थात धर्म सीमाओं में रहते हुए मानव आदर्श उन्हें स्थापित करना पड़ा। विकास प्रक्रिया में श्री राम ने अपने जीवन काल में ही उन सारी बातों को व्यवहारिक रूप प्रदान किया।

.....परन्तु अभी विकास की एक और सीढ़ी की आवश्यकता थी और यह विकास श्री कृष्ण के रूप में, श्री विष्णु के सम्पूर्ण अवतार द्वारा हुआ। श्री कृष्ण का पूर्ण रूप क्या है ? उनका यह कथन कि पूरा विश्व एक लीला है और आपको चीज़ों के विषय में गम्भीर नहीं होना है, परन्तु सहजयोगियों को पहले श्री राम की तरह बनना है। श्री विष्णु को भी पहले श्री राम बनना पड़ा। हमारे लिये अभी तक श्री राम की ही अवस्था है।

.....परिवार, सुख-सुविधाएँ, धन आदि सभी वरदान आपको प्राप्त हैं। इन वस्तुओं के लालच में यदि आप आ गए तो आप जाल में फँस सकते हैं। यदि श्री कृष्णसम बनना चाहते हैं तो जीवन केवल लीला या आनन्द मात्र ही नहीं है। कंस को मारकर पारिवारिक तथा प्रजा की कठिनाइयों का अंत करने के बाद ही श्री कृष्ण ने कहा कि जीवन एक लीला है। इसी प्रकार हमें भी अपने अन्तस के कंस तथा अन्य राक्षसों का वध करना है, तभी हम जीवन को लीला कह सकेंगे। श्री कृष्ण अच्छी तरह जानते थे कि वे विष्णु अवतार हैं और अपनी पूर्णावस्था तक पहुँच चुके हैं और अब उन्हें लीला की अवधारणा को स्थापित करना है। सहजयोगियों के लिये भी इसी प्रकार से जीवन एक लीला मात्र बन रहा है।

प.पू.श्री माताजी, १९.०८.१९९०

.....आज जब सहजयोग धर्म के रूप में स्थापित हो गया है तो हमें धर्म के आधार श्री विष्णु को समझना आवश्यक है। व्यक्ति को समझना है कि धर्म का आधार क्या है? भौतिक पदार्थ की आठ संयोजकताएँ होती हैं, ये नकारात्मक-सकारात्मक और तटस्थ होती हैं। पर मानव में दस संयोजकताएं हैं और हमारे अन्दर इनकी सृष्टि श्री विष्णु जी ने की है, वे ही इसकी रक्षा, देखभाल और पोषण करते हैं। जब भी वे देखते हैं कि मानव का पतन हो रहा है, तो वे जन्म लेते हैं। विराट उनकी अन्तिम अवस्था है। इस अवस्था में विष्णुतत्व दो हिस्सों में बँट जाता है, एक विराटांगना को चला जाता है और एक विराट को, परन्तु तीसरा तत्व महाविष्णु है जो भगवान

ईसा मसीह के रूप में अवतरित हुए। आज के समय में ये तीनों तत्व मुख्यतः सहस्रार में गतिशील हैं।

विष्णुतत्व में आप देख सकते हैं कि आन्तरिक धर्म का संदेश पूरे विश्व में फैल रहा है। विकास प्रक्रिया में इन धर्मों को स्थापित करना गुरु का कार्य था और इनकी स्थापना से मानव को धार्मिक बनाया गया था।

धर्म अन्तर्निहित है, इसलिये आपमें विष्णुतत्व का जागृत होना आवश्यक है, फिर यह तत्व तो कई ओर फैलता है क्योंकि विष्णु ही रोग मुक्त करते हैं। वे ही धनवन्तरी हैं, एक चिकित्सक, क्योंकि वे ही मानव के रक्षक हैं। यदि हम अपने धर्म की रक्षा करते रहें तो हम बीमार नहीं हो सकते और किसी कारण यदि बीमार हो जाते हैं तो श्री विष्णु जी रोग मुक्त करके हमारी रक्षा करते हैं।

.....वे यम भी है। अर्थात हमारी मृत्यु के लिये भी वे ही ज़िम्मेदार हैं। निःसन्देह शिव, जीवनतत्व, आत्मा को पहले जाना होता है और तब यम शरीर को सम्भालने के लिये आते हैं। श्री विष्णु ही निर्णय करते हैं कि आपको कहाँ भेजा जाना चाहिये, आपको अधर में लटके रहना चाहिए, या नर्क में या स्वर्ग में भेजा जाना चाहिए। ये सब निर्णय महाविष्णु की सहायता से लिये जाते हैं। मृत शरीर जब पड़ा होता है, केवल आत्मा को ले कर उचित स्थान पर रखने के समय यह कार्य किया जाता है। मान लीजिये कोई व्यक्ति अधार्मिक है तो वे उसे ले जाकर के नर्क में डाल देते हैं।

श्री विष्णु को धुम्रपान या तम्बाकू पसन्द नहीं है, उन्हें मदिरा, नशीले पदार्थ और मानवकृत बहुत सी औषधियाँ पसन्द नहीं हैं। कोई सहजयोगी यदि प्रतिजीवाणु (Antibiotic) लेता है तो उसे कै (उल्टी) हो जायेगी। जो भी मात्रा या गुण हों, हम बहुत सारी दवाइयाँ नहीं ले सकते। स्वतः ही आप ब्राह्मण की तरह से हो जाएँगे, जो इस प्रकार की चीज़ों से दूर रहता है। तब आप किसी भी ऐसे स्थान पर न तो जाएंगे और न खाना खाएंगे जहाँ लोग सहजयोग के विरुद्ध हैं या अधार्मिक हैं। मुझे बताना नहीं पड़ता कि ऐसा करो, ऐसा न करो। स्वतः ही आप न तो किसी की हत्या करेंगे और न ही कोई पाप करेंगे। परिपक्वता आने पर आप कोई ग़लत कार्य नहीं करेंगे, केवल अपने गुणों का आनन्द लेंगे। जिन ख़ूबियों को हम गुण कहते हैं वे विष्णुतत्व हैं।

विष्णुतत्व को स्थापित करना हमारे लिये कठिन कार्य नहीं है। हमें मात्र इसे पहचानना है। उन्नत होने पर अधर्म शनैः शनैः क्षीण हो जाता है। भूतकाल समाप्त हो गया है उसे भूल जाएं। विष्णु जी के सारे तत्व अब आपमें जागृत हो गए हैं, आप इनका उपयोग करें।

प.पू.श्री माताजी, १३.०७.१९९४

२. श्रीलक्ष्मी - क्षेमप्रदायिका

लक्ष्मी तत्व

आज के दिन (दिवाली) हम लक्ष्मीतत्व अर्थात अपनी नाभि की पूजा करते हैं। वे इतनी हितकर एवं

करुणामय हैं कि कभी किसी पर दबाव नहीं डालतीं, जबकि प्रायः धनी व्यक्ति दूसरे लोगों पर दबाव डालने का प्रयत्न करते हैं। यहाँ तक की सहजयोग में भी यदि कोई थोड़ा सा बेहतर स्थिति में है तो वह अन्य लोगों को पीछे धकेलने, आयोजन करने और उनपर नियन्त्रण करने का प्रयत्न करता है। ऐसे लोग सोचते है कि धन से उन्हें ये शक्ति प्राप्त हुई है। परन्तु स्वयं लक्ष्मी जी तो कमल पर खड़ी हैं। उनके व्यक्तित्व का सौन्दर्य तो इस चीज़ से झलकता है कि वे फूल पर खड़ी है और किसी को कष्ट नहीं देतीं। लक्ष्मी की पूजा करने वाले लोगों को याद रखना होगा कि उन्हें किसी पर भी न तो दबाव डालना है न किसी को धकेलना है, न किसी पर नियन्त्रण करना है और न किसी को बर्बाद करना है। लक्ष्मीजी के चरण कमल पर हैं और अपने दो हाथों में उन्होंने कमल पकड़े हुए हैं। कमल सौन्दर्य का प्रतीक है और उनका गुलाबी रंग प्रेम का प्रतीक। ये प्रतीक हैं कि जिस व्यक्ति के पास लक्ष्मी हो, धन हो, उसे कमल की तरह से उदार होना चाहिए। कमल छोटे से भँवरे को भी अपने अन्दर सोने का स्थान देता है। अपनी पंखुड़ियों से ढककर उसे सुख पहुँचाता है और उसकी रक्षा करता है।

धनवान व्यक्ति का स्वभाव ऐसा ही होना चाहिए अन्यथा बहुत शीघ्र उसका धन चला जाएगा और या हमेशा उसके मन में पैसे की असुरक्षा बनी रहेगी। यहाँ वहाँ वह अपना धन छिपाना चाहता है। ऐसे व्यक्ति में कोई गरिमा नहीं होती, उसका घर सुखकर नहीं होता क्योंकि उसे हर समय यही चिन्ता लगी रहती है कि गलीचा खराब हो जाएगा, ये खराब हो जाएगा, वो ख़राब हो जाएगा। घर ऐसा होना चाहिए जहाँ आप स्वतन्त्रतापूर्वक रह सकें। भौतिकता की पकड़ आते ही हम लक्ष्मीतत्व से बाहर हो जाते हैं। हमारे अन्दर मौजूद वैभव-सौन्दर्य समाप्त हो जाता है.....। लक्ष्मीतत्व को समझा जाना जाहिए कि भौतिक पदार्थ आपके प्रेम को अभिव्यक्ति करने के लिए हैं। अन्य लोगों के लिए आप क्या कुछ कर सकते हैं, उन्हें कितना सुख दे सकते हैं? मैंने कुछ लोगों में देखा है कि गृहलक्ष्मियाँ कालीनों आदि की ही चिन्ता में लगी रहती हैं! इतना निम्नस्तर तो मानवीय भी नहीं है। उनके लिए धन का अर्थ बैंक में पैसा होना है। लक्ष्मीतत्व का अर्थ अपने प्रेम की अभिव्यक्ति करना है।

उनका (श्रीलक्ष्मी) एक अन्य प्रतिकात्मक गुण ये है कि वे आपकी माँ हैं और माँ तो बस देती ही देती हैं, वे तो बस आनन्ददायिनी हैं। मैं हमेशा सोचती हूँ कि आपको क्या दूँ? मैं बहुत सी चीजें आपको देना चाहती हूँ, ऐसा करना मुझे अच्छा लगता है। आनन्द देने जैसा कुछ नहीं है....। अपने अन्तर्वलोकन में हमें महसूस करना होगा कि हम भौतिकता में बहुत अधिक फँस गए हैं, परन्तु इसका अर्थ ये भी नहीं है कि हम धनार्जन न करें, काम न करें, आलसी बन जाएं या ये कहें कि श्री माताजी ने कहा है कि कमल खाना शुरु कर दो। समझने का प्रयत्न करें कि आप जो पैसा कमा रहे हैं वह देने के लिए है, अन्यथा आपकी स्थिति बिगड़ जाएगी। धन के विषय में आप हमेशा असुरक्षित रहेंगे और सुरक्षित होने के स्थान पर धनवान लोग हमेशा काँपते रहेंगे। ऐसे धन का क्या लाभ है जिसके कारण आप घबराए रहें? इससे बेहतर तो ये है कि थोड़ा धन हो और सहजयोग का आनन्द लें।

लक्ष्मीतत्व धनलोलुपता नहीं है। किसी बन्दर या गधे पर यदि आप बहुत से नोट लादें तो क्या आप उसे लक्ष्मीपति कहेंगे? किसी व्यक्ति के पास कार है परन्तु यदि वह व्यक्ति हमेशा घबराया और परेशान रहता है तो

क्या आप उसे लक्ष्मीपति कहेंगे? इस प्रकार के धन में कोई गरिमा नहीं होती, यह पागलपन है। इसमें न तो कोई संस्कृति है और न माधुर्य। कुछ भी नहीं है।.....ऐसे घरों में मैं यदि कुछ खा लूं तो मुझे उल्टी हो जाती है। मेरी लक्ष्मी को यह सब पसन्द नहीं है। आपको सोचना चाहिए कि आप दूसरे लोगों को क्या दे सकते हैं, उनके लिए क्या कर सकते हैं। सहजयोगी की यह पहली पहचान है। मैंने सुना है कि लोग सहजयोग के लिए भी पैसा नहीं खर्चना चाहते। सहजयोग सबके उद्धार के लिए है.....आप यहाँ विश्व की सहायता करने के लिए हैं, स्वयं को सजाने के लिए या सहजयोग का लाभ उठाने के लिए नहीं। सहजयोग पहले आपको लक्ष्मी की झलक देता है और फिर आपको धन प्रदान करता है। आपको आशीर्वाद (धन) प्राप्त हो जाता है। यह पहला प्रलोभन है जिससे आप नीचे गिर सकते हैं, आपका पतन हो सकता है। इसके बाद दो अन्य प्रतीक हैं। अपने हाथों से वे देतीं हैं। आप यदि एक दरवाजा खोलेंगे तो हवा नहीं आएगी, दूसरा दरवाजा खोलना होगा। उन्हें तो देना ही है। अतः जिन लोगों का लक्ष्मीतत्व विकसित हो चुका है वो सोचते है कि उन्हें क्या देना है, परन्तु अपनी बेकार की चीज़ें वे किसी को नहीं देते। अपने मित्रों को यदि आप व्यर्थ की चीज़ें देते हैं तो अपनी गहराइयों को किस प्रकार छू पाएंगे? सर्वोत्तम चीज़ें उपहार देनी चाहिएं.....देने की कला यदि हम सीख लें तो यह अत्यन्त सुन्दर एवं आनन्ददायी है.....।

परिधि रेखा पर दोनों शक्तियाँ कार्य करती हैं, एक ओर कंजूस लोग हैं तथा दूसरी ओर अनुचित लाभ उठाने वाले। आप यदि उदार बनते हैं तो अनुचित लाभ उठाने वाले लोग भी मौजूद हैं.....कभी-कभी आपका शोषण भी हो जाता है, कोई बात नहीं।.....आपने कोई पाप नहीं किया। शोषणकर्ता ने पाप किया है और वही कष्ट उठाएगा।.....आपको जितनी हानि हुई है उससे दसगुना प्राप्त होगा। सहजयोगियों को यह बात समझनी होगी कि अब हमें परमेश्वरी शक्ति का आशीर्वाद प्राप्त है, हम अकेले नहीं है। यह शक्ति हर समय हमें आशीर्वादित कर रही है। अतः देने का अर्थ ये है कि मेरा कुछ भी नही है। 'मेरा' शब्द को जाना होगा।

सहजयोग में भी मैं यह देखकर हैरान थी कि लोग अपने बच्चों से लिप्त होते हैं, किसी और की सोचते ही नहीं। यह दूसरे प्रकार का स्वार्थ है, केवल अपने बच्चों के विषय में सोचना, किसी और के विषय में नहीं। फिर यही बच्चे असुर बनकर आपको सबक देंगे.....इन बच्चों को यदि आप सामूहिक बनाएं, दूसरे लोगों को देने का आनन्द इन्हें सिखाएं तो बचपन से ही ये अत्यन्त उदार बन जाएंगे। उदारता अवतरणों का गुण है। ऐश्वर्य, ऐश्वर्य का अर्थ केवल धन या वैभव नहीं है, उदारता है। ये धन से ऊपर की बात है और यही किसी अवतरण और सहजयोगी की पहचान है।

.....लक्ष्मीतत्व किस प्रकार आता है। लक्ष्मी जी का जन्म समुद्र से हुआ। उनका जन्म समुद्र से क्यों हुआ? समुद्र को देखें, यह सर्वत्र अपने पंख फैलाता है, पूरी तरह से तपता है ताकि बादल बनें, जाकर ऊँचे पर्वतों से टकराएं और बारिश हो और यह जल नदियों के रूप में वापिस आए। सारा नमक समुद्र अपने में संजोए रखता है। ईसामसीह ने कहा है, आप नमक हैं। नमक क्या है? आपके भोजन को स्वाद प्रदान करने वाला नमक आपका गुरुतत्व है। यदि आप कंजूस हैं तो न तो आप गुरु बन सकते हैं न अगुआ। कल्पना करें कि आप कितने भयानक लगेंगे ! लक्ष्मीतत्व का जन्म गुरुतत्व से हुआ और इस गुरुतत्व का उदय आपमें तब होता है जब आपमें लक्ष्मीतत्व

जागृत होता है। केवल धन मिलने से नहीं, जब आप सोचने लगते हैं कि मैं दूसरे व्यक्ति को कौन सी अच्छी चीज़ दे सकता हूँ, मुझे अन्य लोगों के लिए क्या करना चाहिए, किस प्रकार अपने प्रेम की अभिव्यक्ति करनी चाहिए?

.....गुरुतत्व के बिना धर्म नहीं होता। किसी अन्य के विषय में आप नहीं सोचते-माता, पिता, सामूहिक कार्य, विश्व। अतः आप तुच्छ बनते चले जाते हैं। परन्तु जब लक्ष्मीतत्व का उदय होता है तो अन्य लोगों के लिए प्रेम की प्रथम झलक आपमें आ जाती है। मैं जानती हूँ कि आप सब मुझसे प्रेम करते हैं, परन्तु यह आप सबकी माँ (श्रीमाताजी) का पूर्ण प्रतिबिम्ब नहीं है। आपको परस्पर प्रेम करना होगा, प्रेमपूर्वक परस्पर सभी कुछ बाँटना होगा। प्रेम का ये प्रथम प्रकाश जब आप पर मंडराने लगता है तो इस प्रकाश में चलने से आप अत्यन्त उदार बन जाते हैं और अपनी उदारता का आनन्द लेते हैं।

आपको मध्य में आना होगा क्योंकि इस प्रेम ने प्रकट होना है और पूर्ण विनम्रता में अपनी अभिव्यक्ति करनी है। ऐसा आप अपने लिए कर रहे हैं, किसी अन्य के लिए नहीं। मैंने यदि किसी की धन से सहायता की है तो मैं अपनी सहायता कर रही हूँ क्योंकि उस व्यक्ति का कष्ट मुझसे देखा नहीं जाता। मैं इसके बारे में कोई बात नहीं करना चाहती क्योंकि मैं इसका आनन्द ले रही हूँ।

हमें समझना होगा कि क्या हम बच्चों को बढ़ने दे रहे हैं? क्या वे उदार है? क्या वे सन्त है? क्या वे सुन्दर हैं? वे अन्य लोगों से किस प्रकार बात करते हैं? क्या उनमें आत्मविश्वास है? कल उन्हें सहजयोगियों का नेतृत्व करना है।.....हमें अपने बच्चों को दीपकसम बनाना होगा। दीपक अन्य लोगों के लिए जलता है, अपने लिए नहीं। दिवाली के दीप हम किसलिए जला रहे हैं?अन्य लोगों के लिए। क्या हम इन दीपकों से सीख रहे हैं? क्या हमारे बच्चे अन्य लोगों के लिए जलेंगे? आप तो उन्हें स्वार्थी बना रहे हैं। हज़ारों बच्चे जन्म लेंगे और चाहे वे जन्मजात आत्मसाक्षात्कारी ही हों, आप उन्हें बिगाड़ देते हैं.....बच्चों को तुच्छ न बनाएं।

महालक्ष्मीतत्व अन्तिम बार फातिमा के रूप में अवतरित हुआ। फातिमा गृहलक्ष्मी थीं। वे घर पर ही रहती थीं, घर रह कर उन्होंने अपने बच्चों तथा सत्य और धर्म के लिए लड़ने वाले अपने पति की देखभाल की।

महालक्ष्मी तत्व क्या है? सर्वप्रथम यह बलिदान है, सत्य की बेदी पर अपने बच्चों का बलिदान। यद्यपि सहजयोग में ऐसा कुछ करने की आवश्यकता नहीं है, आप आशीर्वादित लोग हैं। परन्तु यदि आप अपने बच्चों का पालन पोषण ठीक प्रकार से नहीं करेंगे तो कल को बच्चे आपको ही इसका जिम्मेदार ठहराएंगे। बच्चे यदि जिद्दी हैं, दूसरे लोगों से अपना प्रेम नहीं बाँटते तो तुरन्त उन्हें रोकना होगा। बच्चे बहुत चतुर होते हैं, ये पता लगते ही कि उन्हें आपका प्रेम मिलना बन्द हो जाएगा, वे एकदम सुधरने लगेंगे।

महालक्ष्मी के तीन सिद्धान्त हैं और चौथा मेरा अपना है। मेरा कार्य बहुत ऊँचा और विशाल है तथा उसके लिए गहन धैर्य की आवश्यकता है। मैं यदि किसी का बलिदान करुं तो यह कार्यान्वित न होगा। मुझे स्वयं को और अपने परिवार का बलिदान करना होगा। मुझे अपनी नींद, सुखचैन तथा अन्य चीज़ों का बलिदान करना

होगा। इसलिए मुझे बलिदान देना होगा कि आपके महालक्ष्मी तत्व की अभिव्यक्ति हो सके, इसकी जड़ें लग सकें .....आप यदि अपनी सुख सुविधाओं से, आलस्य, स्वार्थ आदि से चिपके रहेंगे तो इन सब चीजों के होते हुए भी आप उनका आनन्द नहीं ले सकेंगे। केवल अपने आनन्द की चिन्ता करने से बाकी सभी कुछ समाप्त हो जाता है। प्रेम की शक्ति हर चीज़ पर स्वामित्व प्रदान करती है- आपके शरीर, मन, अहंकार सभी चीज़ों पर। आप यदि किसी से निर्वाज्य प्रेम करते हैं तो यह प्रेम की शक्ति आप पर सभी चीज़ों की, सभी विचारों की वर्षा करती है, इसके आनन्द का एक एहसास मात्र। यह आनन्द उस व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं है जो शुद्ध प्रेम नहीं है। प्रेम की शक्ति ही आनन्द का स्रोत है और प्रेमविहीन हृदय को यह आनन्द से परिपूर्ण नहीं करती।

प.पू.माताजी, इटली, २१.१०.१९९०

भारत में लक्ष्मी को धन की देवी के रूप में मानते हैं। लक्ष्मी के इस प्रतीक का वर्णन वास्तविकता में सन्तों और पैगम्बरों ने किया परन्तु बाद में लोग न तो प्रतीक को समझ पाये और न इसके पीछे छिपी वास्तविकता को। उन्होंने सोचा कि लक्ष्मी धन-दौलत, वैभव, सोना-चाँदी, हीरे तथा धन-धान्य का प्रतीक हैं। उन्होंने धन की पूजा शुरु कर दी और इस प्रकार वैभव की प्रतीक देवी को तोड़-मरोड़ कर दर्शाया गया।

देवी लक्ष्मी का प्रतीक बिल्कुल भिन्न है। सर्वप्रथम जिसके पास लक्ष्मी है, उसे माँ होना पड़ता है। उसमें एक माँ का प्रेम होना चाहिए। माँ पूर्ण शक्तियों का स्रोत है, उसमें धैर्य, प्रेम एवं करुणा होते हैं। तो व्यक्ति जब करुणा में नहीं होता और अपने धन को दूसरो के हित के लिये उपयोग नहीं करता, तब तक धन के होते हुए भी वह प्रसन्न नहीं रह सकता। आज लोग अपने धन से अपना ही विनाश करने में लगे हैं। क्रोध, वासना और लोभ की अभिव्यक्ति के लिये वे अपने धन का दुरुपयोग कर रहे हैं। स्वयं को उत्कृष्ट दर्शाने के लिये आडम्बरों पर वे अपना धन बर्बाद कर रहे हैं, पथ भ्रष्ट होते जा रहे हैं।

प.पू.माताजी, रूस, १२.११.१९९३

मैंने बताया है कि लक्ष्मी जी कैसे बनी हैं। उनके हाथ में दो कमल हैं। गुलाबी रंग द्योतक होता है 'प्रेम' का। जिस मनुष्य के हृदय में प्रेम नहीं है वह लक्ष्मीपति नहीं हो सकता। लक्ष्मीपति का घर ऐसा होना चाहिये जैसे कमल का फूल होता है। कमल के फूल के अन्दर भौंरे जैसा शुष्क जानवर भी आश्रय पाता है, लक्ष्मी जी उसे अपने अन्दर स्थान देती हैं, अपनी गोद में उसे सुलाती हैं। उसको शान्ति देती हैं। लक्ष्मी जी एक हाथ से दान देती हैं और एक हाथ से आश्रय देती हैं। लक्ष्मीपति का अर्थ होता है कि उसका दिल बहुत बड़ा है, कंजूस आदमी लक्ष्मीपति नहीं हो सकता। बादशाहत होनी चाहिए। जिस आदमी की तबियत में बादशाहत नहीं होती उसे लक्ष्मीपति नहीं कहना चाहिये।

कमल के जैसा उसका रहन-सहन, उसकी शक्ल होनी चाहिये। ऐसा आदमी सुरभित होना चाहिये। कमल का फूल आपने देखा है, उसमें हमेशा थोड़ी सी झुकाव रहती है। कमल कभी भी तनकर खड़ा नहीं होता। बहुत ही नम्र होना चाहिये। जो दिखाते फिरते है कि हमारे पास यह चीज़ है, वो चीज है, फलाना है, ढिकाना है, वो लक्ष्मीपति नहीं हो सकता। मातृत्व उनमें होना चाहिये, माँ का हृदय होना चाहिये। तब उसे लक्ष्मीपति कहना चाहिये।

लक्ष्मी जी दूसरे हाथ से दान देती हैं। दानत्व वाला आदमी जो होता है वो अपने लिये कु छ भी संग्रह नहीं करता, आदमी जो होता है वो अपने लिये कुछ भी संग्रह नहीं करता, दूसरों को बाँटता रहता है, देता रहता है, देने में ही उसको आनन्द आता है, लेने में नहीं.....

परमात्मा ने लक्ष्मी को एक स्त्री स्वरूप-एक माँ स्वरूप बनाया हुआ है। एक कमल पर लक्ष्मीजी खड़ी हो जाती हैं। सोचिये कि एक कमल पर खड़ा होना माने आदमी में भी कितनी सादगी होनी चाहिये, बिल्कुल हल्का, उसमें कोई दोष नहीं।

जब आपके अन्दर लक्ष्मीतत्व जागृत हो जाता है तो पहली चीज़ आती है-संतोष। ऐसे तो किसी भी चीज़ का अंत नहीं है। आप जानते हैं कि economics में कहते हैं कि wants in general are insatiable (सामान्यतः किसी भी चाहत की तृप्ति नहीं होती) आज आपके पास ये है, कल वो चाहिये। आदमी पागल जैसा दौड़ता रहता है, उसकी कोई हद ही नहीं होती, आज यह मिला, तो वो चाहिए, वो मिला तो ये चाहिये।

लेकिन (लक्ष्मीतत्व की जागृति से) आदमी को संतोष आता है, उसे संतोष आ जाता है। जब तक आदमी को संतोष नहीं आएगा वह किसी चीज का मज़ा नहीं ले सकता क्योंकि संतोष जो है वह वर्तमान की चीज़ है, शिशिशपीं की, आशा जो है, भविष्य की चीज़ है, future की और निराशा जो है वो रिीं की चीज़ है-भूतकाल की। आप जब संतोष में खड़े होते हैं तो पूर्णतया संतुष्ट, तब आप पूरा उसका आनन्द उठा रहे हैं जो आपको मिला हुआ है।

संतुष्ट करना लक्ष्मी जी का गुण है, लक्ष्मी जी से आशीर्वादित होने का अर्थ है संतुष्ट होना। आप जान लेते है कि धन, सत्ता तथा अन्य बेकार की चीज़ों के पीछे मारे-मारे फिरना मूर्खता है। धन है तो उसका सद्उपयोग करते हैं दूसरों की मदद करने में।

प.पू.माताजी, लक्ष्मीतत्व, चै.ल. २००४

.....जहाँ शराब चलती है, उनके घर तो लक्ष्मी जी का सुख नहीं हो सकता। खुशहाली शराब के बिल्कुल विरोध में रहती है। शराब तो इतनी हानिकारक चीज़ है, इस तरफ से अगर बोतल आयी तो उस तरफ से लक्ष्मी जी चली गयीं-सीधा हिसाब। आप विचारिये इस कदर गंदी चीज़ें हम लोगों ने अपना ली हैं जिसके कारण हमारा लक्ष्मीतत्व चला गया। लक्ष्मीतत्व को जागृत करना बहुत कठिन है इन आदतों के साथ...

जब हम...तांत्रिक विद्या और मैली विद्या करते हैं तो लक्ष्मी जी दूसरे पैर से चली जाती हैं। जिस घर में तांत्रिक विद्या शुरु हो जाएगी लक्ष्मी जी दूसरे पैर से चली जायेंगी।.....जितनी मैली विद्या, जितनी भूत विद्या, प्रेत विद्या श्मशान विद्या और यह दुष्ट गुरुओं का जो चक्कर चला....जब तक आप इनको हृदय से निकाल नहीं दीजिएगा... आपके समाज की गरीबी कभी हट नहीं सकती क्योंकि लक्ष्मी जी ऐसे स्थान में बसती नहीं।

जो कुछ (आपके पास) है उसमें समाधान से परमात्मा को दृष्टि देकर के अपने लक्ष्मीतत्व को आप

जागृत करें.... उस जागृति के लिए आपको बुद्धि के कोई घोड़े दौड़ाने की जरूरत नहीं कोई विशेष सोचने की जरूरत नहीं केवल कुण्डलिनी का जागरण होते ही यह कार्य हो सकता है।

तो जो पैसा लक्ष्मी स्वरूप है उस पैसे को आप प्राप्त करो।

प.पू.माताजी, नई दिल्ली, १५.०३.१९८४

लक्ष्मी जी अपनी नाभि में निवास करती हैं और उनके संतुष्ट होने पर ही महालक्ष्मीतत्व जागृत होता है। तभी आप आगे देखने लगते हैं।.....नाभि में ही विष्णु जी का जो स्थान है और विष्णु या लक्ष्मी जिसे हम लक्ष्मी, उनकी जो शक्ति मानते हैं, इसी में हमारी खोज शुरु होती है। जब हम अमीबा में रहते हैं तो खाना खोजते हैं, ज़रा उससे बड़े जानवर हो गए तो हम कुछ संग साथी ढूँढते हैं, उसके बाद इंसान बन गए तो हम सत्ता खोजते हैं, हम इसमें पैसा खोजते हैं। लेकिन सत्ता और पैसा पा लेने के बाद भी आदमी के अंदर वो जो है संतोष, नहीं आ पाता। किसी चीज़ में वह आनंद नहीं मिला जिसे वह समझ रहा था कि सत्ता और पैसा मिल जाने के बाद अपने आप ही मिल जायेगा। उसे वह आनन्द नहीं मिला जिसे वह वास्तव में खोज रहा था, तब आनन्द की खोज शुरु हो जाती है।

आनन्द की खोज तो नाभि चक्र से ही शुरु होती है, इसी खोज के कारण आज अमीबा से इंसान बने हैं, और इसी खोज के कारण जिससे हम परमात्मा को खोजते हैं, हम इंसान को पहचानते हैं - इसी खोज के कारण। इसलिए लक्ष्मी बहुत ज़रूरी चीज़ हैं।

चार कार्य-उदारता, सुरक्षा, अतिथि सत्कार तथा करुणा करने के पश्चात् आप एक अन्य दिशा की ओर चल पड़ते हैं....आप जिज्ञासु बन जाते है, जिज्ञासु, जिसके द्वारा आप जीवन का सच्चा संतोष प्राप्त करते हैं।

प.पू.माताजी, ९.०३.१९७९

....हमारे अन्दर देवी लक्ष्मी जी बसती हैं। जब हमारी कुण्डलिनी नाभि पर आ जाती है, जब हमारी कुण्डलिनी खुल जाती है तो हमारे अन्दर वो जागृति आ जाती है जिससे लक्ष्मी जी का स्वरूप हमारे अन्दर प्रकट हो जाता है।

प.पू.श्री माताजी, ३१.०३.१९८५

....श्री लक्ष्मी जी और सभी देवियाँ महिलाएँ है, इनकी विशेषता क्या है? अपना स्वभाव एवं गुणों का आशीर्वाद लोगों को देना। लक्ष्मी जी के वरदानों में से धन भी एक है, धन जब आवश्यकता से अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है तो लक्ष्मीतत्व का सम्मान नहीं होता।

प.पू.श्री माताजी, काना जोहारी, २.०७.२०००

श्री माताजी द्वारा अष्टलक्ष्मियों की व्याख्या

सर्वप्रथम आद्यलक्ष्मी हैं। आद्य अर्थात आदि (Primordial) लक्ष्मी। जैसे मैंने आपको बताया था, वे समुद्र से निकलीं थीं। तो ऐसा ही है। जैसे ईसा-मसीह की माँ को मेरी या मरियम कहा गया क्योंकि उनकी उत्पत्ति सागर से हुई, कोई नहीं जानता कि उनको मेरी क्यों कहा गया। मेरा नाम नीरा था-अर्थात जल से उत्पन्न हुई।

दूसरी विद्यालक्ष्मी हैं। ये आपको परमेश्वरी शक्ति को संभालने की विधि सिखाती हैं। ये बात अच्छी तरह समझ ली जानी चाहिए कि लक्ष्मी हैं क्या? वे करुणाशीलता हैं, अतःवे आपको सिखाती हैं कि इस शक्ति का सुहृदतापूर्वक किस प्रकार उपयोग करें। अब, यही आशीर्वाद आपको प्राप्त हो रहा है कि आप आद्यलक्ष्मी की शक्ति को प्राप्त करें जिसके द्वारा आप जलसम बन जाएं। जल क्या है? जल में स्वच्छ करने की शक्ति है, जो मैं हूँ। जल के बिना हम जीवित नहीं रह सकते। अतः पहला आशीर्वाद ये है कि आपके चेहरे तेजोमय हो उठते हैं। आद्यलक्ष्मी की कृपा से स्वच्छ होकर आप सभी गम्भीर चीजों को, प्रकाश को तथा विस्मृत चीजों को देख सकते हैं।

विद्यालक्ष्मी, मैंने आपको बताया, ज्ञान प्रदान करती हैं। ज्ञान, कि परमेश्वरी शक्ति को सुहृदतापूर्वक किस प्रकार संभालना है। मैं एक उदाहरण दूंगी, मैंने बहुत से लोगों को बन्धन देते हुए देखा है, उनका तरीका अत्यन्त बेढबा होता है। नहीं इस प्रकार नहीं किया जाना चाहिए। ये लक्ष्मी है। अतः यह कार्य अत्यन्त सावधानीपूर्वक करें। आप मुझें देखें, मैं कैसे बन्धन देती हूँ। मैं इस प्रकार कभी नहीं करती। कर ही नहीं सकती। सम्मानपूर्वक, गरिमापूर्वक। वे सम्मानपक्ष का प्रतिनिधित्व करती हैं और गरिमापूर्वक यह कार्य करने का ज्ञान आपको प्राप्त होता है। सभी कार्य गरिमापूर्वक किए जाने चाहिएं, ऐसे तरीके से कि गरिमामय लगें। कुछ लोग बातचीत करते हैं परन्तु उनमें गरिमा नहीं होती। सहजयोग का ज्ञान देने वाले कुछ लोगों में भी गरिमा बिल्कुल नहीं होती और वे अत्यन्त गरिमाविहीन तरीके से बात करते हैं। परमेश्वरी ज्ञान को गरिमापूर्वक किस प्रकार उपयोग करना है, यह आशीर्वाद विद्यालक्ष्मी प्रदान करती हैं।

सौभाग्य लक्ष्मी - वे आपको सौभाग्य प्रदान करती हैं। सौभाग्य का अर्थ पैसा नहीं है, इसका अर्थ है पैसे की गरिमा। पैसा बहुत से लोगों के पास है परन्तु यह पैसा वैसा ही है जैसे गधे के ऊपर धन का लदा होना। ऐसे व्यक्ति में आपको गरिमा बिल्कुल नहीं दिखाई देती। सौभाग्य का अर्थ केवल पैसा ही नहीं हैं। इसका अर्थ है खुशकिस्मती, हर चीज़ में अच्छा भाग्य। आशीर्वाद का अत्यन्त गरिमापूर्वक उपयोग ताकि आप भी आशीर्वादित हों और आपसे मिलने वाले लोगों को भी सौभाग्य का वह आशिष प्राप्त हो।

अमृतलक्ष्मी - अमृत का अर्थ है अमृत, जिसे लेने के बाद मृत्यु नहीं होती अर्थात चिरंजीवी होना। अमृतलक्ष्मी आपको अनन्त जीवन प्रदान करती हैं।

गृहलक्ष्मी - परिवार की देवी हैं। जरूरी नहीं कि सभी गृहणियाँ गृहलक्ष्मी हों। वे कलहणियाँ भी हो सकती हैं, भयानक महिलाएं भी हो सकती है। परिवार के देवता का निवास यदि आपके अन्दर है, केवल तभी आप गृहलक्ष्मियाँ है अन्यथा नहीं।

इसके बाद **राज्यलक्ष्मी** हैं - वे राजाओं को गरिमा प्रदान करती हैं। राजा यदि नौकर की तरह से व्यवहार करे तो उसे राजा नहीं कहा जाना चाहिए। उन्हें अत्यन्त सम्मानपूर्वक व्यवहार करना होगा। राजा की गरिमा, उसका प्रताप, राजलक्ष्मी का वरदान है। परन्तु सहजयोगी राजा नहीं होता, वह अत्यन्त शानदार तरीके से चलता

है, भव्य तरीके से कार्य करता है, और अत्यन्त भव्यतापूर्वक लोगों से व्यवहार करता है। अपने सभी कार्यों में वह इतना गरिमामय होता है कि लोग सोचते हैं कि देखो राजा आ रहा है।

सत्यलक्ष्मी - सत्यलक्ष्मी के माध्यम से आपको सत्य की चेतना प्राप्त होती है। उसके अतिरिक्त भी सत्यचेतना विद्यमान है परन्तु इस सत्य को आप अत्यन्त भव्य तरीके से प्रस्तुत करते हैं। ये सत्य है, आप इसे स्वीकार करें, ऐसे नहीं। सत्य से आपने लोगों को चोट नहीं पहुँचानी। फूलों में रखकर आपने लोगों को सत्य देना है। ये सत्यलक्ष्मी है।

निःसन्देह ये सभी लक्ष्मीतत्व हमारे हृदय में स्थापित शक्तियाँ हैं परन्तु वास्तव में इनकी अभिव्यक्ति हमारे मस्तिष्क में होनी चाहिए। मस्तिष्क विराट है, यह विष्णु है जो विराट बनते हैं। अतः ये सभी शक्तियाँ, विशेषरूप से यह शक्ति (सत्यलक्ष्मी) मस्तिष्क में है। अतः मस्तिष्क स्वतः इस प्रकार कार्य करता है कि लोग सोचते हैं कि यह कोई विशिष्ट व्यक्तित्व है। सहजयोगी को हमेशा समझ होती है कि आनन्द किस प्रकार उठाना है। सहजयोगी कभी चिन्तित नहीं होता। आपको भी आनन्द लेने के योग्य होना चाहिए। मान लो आप कोई बेढबी, या हास्यास्पद चीज़ देखते हैं तो आपको हँसना और आनन्द लेना चाहिए। ये बहुत कठिन कार्य है। बेढबी चीज का आनन्द लेना। कोई यदि अटपटा या भद्दा हो तो उस पर गुस्सा नहीं करना चाहिए, उसे आनन्ददायक बना लेना चाहिए। ये महानतम चीज़ है, मेरे विचार से यह महानतम आशीर्वाद है जो वे आपको प्रदान करती हैं- आनन्द लेने की शक्ति। अन्यथा आप जो चाहे प्रयत्न करें, लोग किसी चीज़ का आनन्द नहीं लेते, क्योंकि वे इतने अहंवादी हो गए हैं कि उनके मस्तिष्क में कुछ घुसता ही नहीं। उन्हें तो किसी छड़ी से गुदगुदाना पड़ेगा।

योगलक्ष्मी - जो आपको योग प्रदान करती हैं - ये शक्ति आपके अन्दर हैं। आपके अन्तःस्थित लक्ष्मी की शक्ति अर्थात आप अन्य लोगों को योग प्रदान करते हैं। जब आप अन्य लोगों को योग की शक्ति प्रदान करते हैं, मेरा अभिप्राय है कि जब आप अपनी योग शक्ति का उपयोग करते हैं तब बन्दर, गधे या घोड़े की तरह से व्यवहार नहीं करते। गरिमापूर्वक ये कार्य करते हैं। इस प्रकार इस कार्य को करें कि यह अत्यन्त गरिमामय हो, अर्थात अत्यन्त भद्र, गरिमामय एवं भव्य तरीके से। तो यह इस प्रकार है। अब जब आपने इस प्रकार इसकी स्तुति गान किया है, इस शक्ति से आपको आशीर्वादित कर दिया गया है। अब यदि आप चाहें तो भी गरिमाविहीन आचरण नहीं कर सकते। आपको स्थिर कर दिया गया है। हार्दिक धन्यवाद!

प.पू.माताजी, कोमो, इटली, २५.१०.१९८७

आपको समझना है कि सहस्रार खुलने के बाद आपमें वह शक्ति आ गई है जिसमें ये तीनों गुण हैं। यह महान शक्ति आपको प्राप्त हो गयी है। इसके लिए हमें बहुत सफल, धनी या विख्यात लोगों की आवश्यकता नहीं। हमें चरित्र, सूझबूझ और दृढ़ता वाले लोगों की आवश्यकता है जो ये कहें कि चाहे कुछ भी हो मैं इसे अपनाऊंगा, इसका साथ दूंगा और इसे सहयोग दूंगा।

प.पू.श्रीमाताजी, १०.५.१९९२

✦ प्रकाशक ✦

निर्मल ट्रैन्सफोर्मेशन प्रा. लि.

प्लॉट नं.८, चंद्रगुप्त हाउसिंग सोसाइटी, पौड रोड, कोथरुड, पुणे - ४११ ०३८. फोन : ०२०- २५२८६५३७, २५२८६७२०, e-mail : sale@nitl.co.in

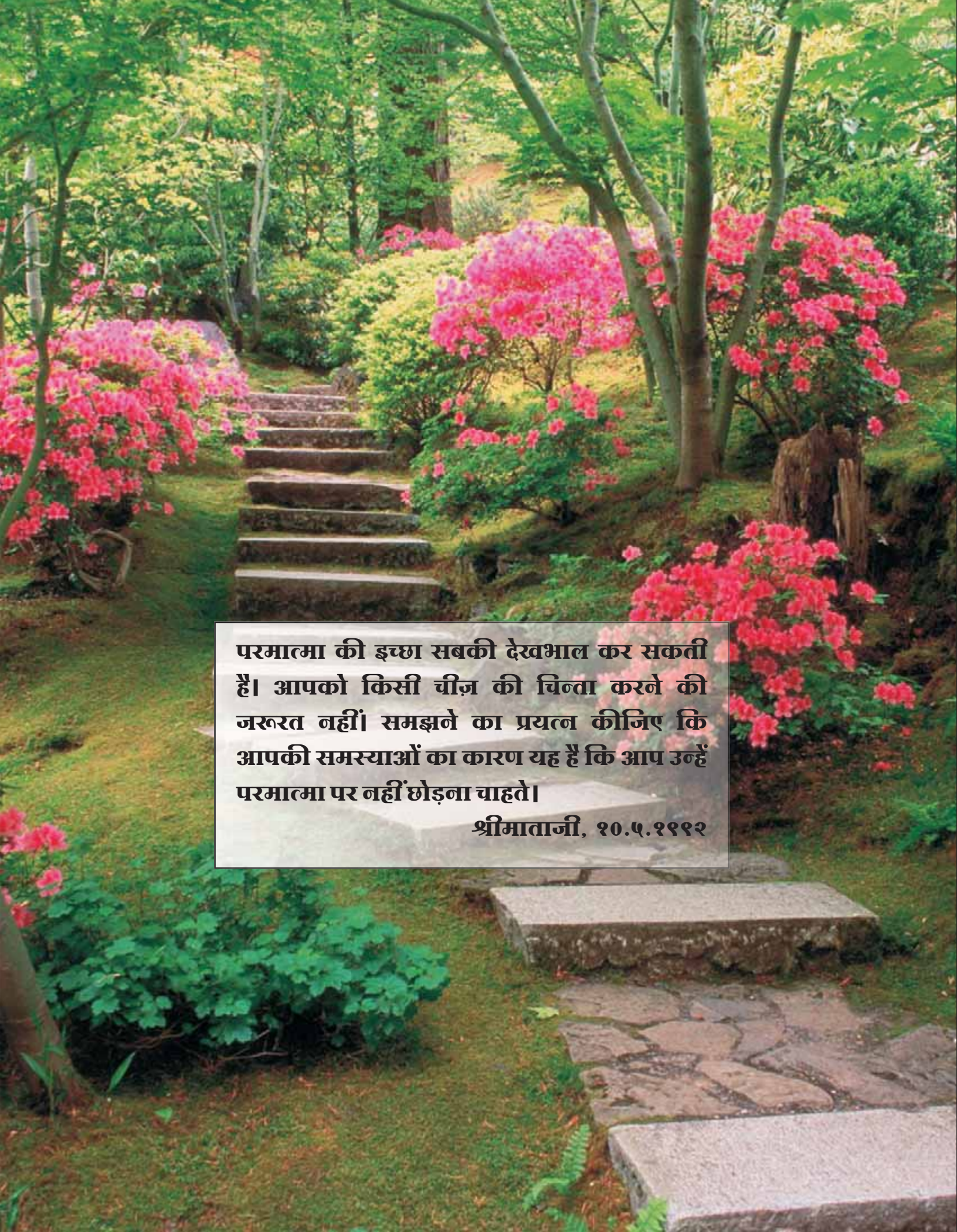

परमात्मा की इच्छा सबकी देखभाल कर सकती है। आपको किसी चीज़ की चिन्ता करने की जरूरत नहीं। समझने का प्रयत्न कीजिए कि आपकी समस्याओं का कारण यह है कि आप उन्हें परमात्मा पर नहीं छोड़ना चाहते।

श्रीमाताजी, १०.५.१९९२